वो रातें जब मैं सोया नहीं

मीनल

सागरकुमार रमणीकलाल

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Sagarkumar Ramniklal 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-235-8

Cover Design: Deepak Katheria
Typesetting: Manisha Rawat

First Edition: May 2026

"कुछ कहानियाँ खत्म होकर भी खत्म नहीं होतीं, वे बस आँखों से उतरकर रूह में बस जाती हैं। मीनल - एक ऐसी ही अनसुनी दास्तान।"

-सागरकुमार रमणीकलाल

मेरे पिताजी को समर्पित

"|| सर्वदेवमयः पिता ||"

पापा,

क्या आपको याद है? वह बचपन की रातें, जब बिजली चली जाती थी और मैं अपनी ज़िद लेकर आपके पास बैठ जाता था। आप बिना थके, बिना झुंझलाए मुझे कहानियाँ और किस्से सुनाया करते थे। मैं उन कहानियों को सिर्फ सुनता नहीं था, बल्कि उनमें जीता था। आज जब मैं अपनी खुद की कहानियाँ लिख रहा हूँ, तो मुझे अहसास होता है कि मेरे भीतर का यह कहानीकार आपकी उन्हीं रातों की देन है।

पापा, ऐसा कोई दिन, ऐसी कोई घड़ी या ऐसा कोई पल नहीं बीतता जब मैं आपको याद नहीं करता। आपको तो सब पता है! आज भी जब मेरे हाथ में पानी का गिलास होता है या चाय-कॉफी का प्याला, तो मेरी नज़रें आपको ढूँढती हैं। मैं मन ही मन आपसे टकराकर कहता हूँ— "चीयर्स पापा!"

मेरी ये सारी कहानियाँ, मेरे शब्द और मेरा यह वजूद—सब आपको ही 'चीयर्स' है। मेरी रगों में जो हिम्मत दौड़ती है, वह किसी और की नहीं, आपकी दी हुई विरासत है। ये कहानियाँ शब्द नहीं, बल्कि आपको मेरा सादर समर्पण हैं।

आप मेरे लिए सिर्फ एक पिता नहीं, बल्कि सबसे श्रेष्ठ शिक्षक रहे हैं। मुझे आज भी आपका वह मंत्र याद है जो आपने तब कहा था जब मैं दुनिया को प्रभावित करने की होड़ में था। आपने कहा था: "बेटा, किसी को खुश करने की कोई ज़रूरत नहीं है। तू बस खुद को खुश रखना सीख ले, दुनिया के लिए वही सब कुछ है।"

उस वक़्त शायद मैं थोड़ा नासमझ था, आपकी बातों की गहराई को पूरी तरह नाप नहीं पाया था। पर आज, ज़िंदगी के इस पड़ाव पर जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो आपकी कही हर बात एक रोशनी की तरह मेरा रास्ता साफ़ कर देती है।

मेरी ये सारी यादें, मेरी ये किताबें और मेरा यह सफर—मैं आपको, मेरी पूजनीय माँ को, मेरे दोनों भाइयों को, मेरी लाडली बहन को और मेरी अर्धांगिनी (मेरी प्राणप्रिया) को समर्पित करता हूँ। आप सबके प्रेम और दुआओं ने ही मुझे इस काबिल बनाया है कि मैं अपनी कहानी दुनिया के सामने रख सकूँ।

सप्रेम,
आपका अपना,

— सागरकुमार रमणीकलाल

प्रस्तावना

यादों के झरोखे से

कहते हैं कि हर इंसान का जीवन एक चलती-फिरती किताब होता है। कोई पन्ना कीमती होता है, तो कोई मामूली, लेकिन हर पन्ने पर दर्ज कोई न कोई किस्सा या हादसा ही हमें 'बेहतर' बनाता है। मेरी यह कहानी भी कुछ ऐसी ही है—शायद मेरी ज़िंदगी का सबसे अनमोल और अनकहा हिस्सा, जो मुझे यकीन है कि कहीं न कहीं आपकी ज़िंदगी के किसी कोने से ज़रूर टकराएगा।

यह कहानी मेरे दिल के एक बहुत खास और अंधेरे कोने में कैद है। खास तौर पर वे रातें... जो आज भी मुझे सोने नहीं देतीं। आज भी जब पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो एक कसक उठती है कि काश! मैं 'मीनल' के लिए कुछ कर पाता। पर अफ़सोस, वक्त रेत की तरह हाथ से फिसल गया।

मीनल कौन थी?

इससे पहले कि आप इस किताब के पन्नों में डूबें, मैं एक बात साफ कर दूँ। अगर आप यह सोच रहे हैं कि वह मेरी प्रेमिका थी या मेरी पत्नी, तो आप गलत हैं। सच तो यह है कि मैं उसे जानता तक नहीं था। हम दो अजनबी थे, जो एक 'रॉन्ग नंबर' के ज़रिए एक-दूसरे की आवाज़ों से टकरा गए थे। उसकी आवाज़... वह आज भी मेरे कानों में गूँजती है। वह आम लड़कियों जैसी कोमल नहीं, बल्कि थोड़ी भारी और मर्दाना थी। पहली बार जब सुना, तो मुझे लगा कोई दोस्त मज़ाक कर रहा है, मेरी 'फिरकी' ले रहा है। मुझे हँसी आई थी कि कोई इतनी बुरी तरह लड़की की आवाज़ निकालने की कोशिश कैसे कर सकता है! लेकिन वह मज़ाक नहीं, एक हकीकत थी जिसने मेरी सोच बदल दी।

एक कलाकार का सपना

आज 2026 की एक शांत शाम है। मैं यूनाइटेड किंगडम के लीसेस्टर शहर के अपने एक छोटे से कमरे में बैठा हूँ। बाहर की दुनिया अपनी रफ्तार से चल रही है, और मैं अपने कमरे में 90 के दशक के उन गानों में खोया हूँ जो यादों की खिड़की खोल देते हैं। अचानक ख्याल आया कि क्यों न उन लोगों के बारे में लिखूँ जो मेरी ज़िंदगी में आए और अपनी एक अमिट छाप छोड़ गए।

सच कहूँ तो, आज मैं जो काम (नौकरी) कर रहा हूँ, उसमें मेरा मन कभी नहीं लगा। मेरा दिल तो हमेशा कागज़ और रंगों में बसा था। कहानियाँ बुनना और कैनवास पर पेंटिंग उकेरना ही मेरी असल पहचान है। मेरा एक सपना है—एक ऐसा सपना जो शायद हर कलाकार देखता है। मैं चाहता हूँ कि लोग मेरी किताबें पढ़ें, मुझे गूगल पर सर्च करें, और एक दिन मैं एक बड़ा चित्रकार या कहानीकार बनकर उभरूँ। मेरा मन कहता है कि मेरी कहानियों पर फ़िल्में बनें, मैं उनके संवाद और गीत लिखूँ, और एक रोज़ मंच पर खड़े होकर हाथ में अवॉर्ड लिए एक लंबी स्पीच दूँ, जहाँ मैं लोगों को हँसा सकूँ और प्रेरित कर सकूँ।

प्रेरणा और शुरुआत

इस सपने को हकीकत में बदलने की हिम्मत मुझे मेरी पत्नी, श्रीमती उमा ने दी। उमा को मेरे जीवन की हर कहानी, हर किस्से का पता है। जब मैंने उससे अपने इस लेखन के बारे में बात की, तो उसने मेरा हाथ थामकर कहा— "लिखो, दुनिया को तुम्हारी कहानियों की ज़रूरत है।"

उसी भरोसे के दम पर मैं आज यह पहली किताब आपके सामने रख रहा हूँ। यह तो बस शुरुआत है, आने वाले समय में मैं अपने जीवन के हर उस इंसान पर किताब लिखूँगा जिसने मुझे कुछ सिखाया।

यह कहानी अब मेरी नहीं, आपकी है। इसे पढ़िए, इसे महसूस कीजिए और मुझे अपनी राय ज़रूर दीजिएगा। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या 'मीनल' की उस आवाज़ ने आपके दिल में भी वही हलचल पैदा की, जो मेरे दिल में आज भी होती है?

— सागरकुमार रमणीकलाल

आरंभ

जीवन की पिच पर: **संघर्ष, प्रार्थना और एक 'अच्छी ज़िंदगी' की तलाश**

लेखक: सागरकुमार रमणीकलाल

एक पल के लिए सब कुछ ठहर जाए। आप भूल जाइए कि आप कौन हैं, आप कहाँ से आए हैं, आपने अब तक क्या हासिल किया या क्या खोया। अपने भीतर के शोर को शांत कर लीजिए और खुद को एकदम खाली कर दीजिए। चलिए, मेरे साथ मेरे जीवन के इस सफर पर। मैं आपसे वादा करता हूँ कि इस सफर की कोई न कोई कहानी, कोई न कोई मोड़, आपके दिल के किसी कोने को ज़रूर छुएगा और आपको खुद से जोड़ देगा।

प्रार्थना: **मांग और समर्पण के बीच का सेतु**

हम सब अक्सर ईश्वर के सामने हाथ फैलाए खड़े होते हैं। हमारी झोली हमेशा माँगों से भरी होती है। कभी-कभी मुझे लगता है कि काश! मैंने वह एक सुबह भगवान से माँग ली होती, जब मन पूरी तरह साफ होता है। कहते हैं कि सुबह के समय सच्चे और निर्मल मन से की गई प्रार्थनाएँ सीधे ईश्वर तक पहुँचती हैं। मैं यह दावा नहीं करूँगा कि मुझे ईश्वर से कुछ नहीं चाहिए। सच तो यह है कि मैं हर पल, हर सांस के साथ उनसे कुछ न कुछ माँगता ही रहता हूँ।

पर क्या हम वास्तव में जानते हैं कि हमें जीवन में चाहिए क्या? आज जो देखा, उसे पाने की ज़िद कर ली। कल कुछ और पसंद आया, तो उसके लिए हाथ फैला दिए। हमारी इच्छाएँ मौसम की तरह बदलती रहती हैं। कोई पैसा माँगता है, कोई धन-दौलत, कोई अच्छी सेहत, तो कोई परिवार की खुशियाँ। किसी को बड़ी कार चाहिए, तो किसी को बड़ा बंगला।

लेकिन इसी भीड़ में कुछ लोग मेरी तरह भी होते हैं। मेरी प्रार्थनाएँ अक्सर अपनों से आगे बढ़कर दूसरों पर जाकर ठहर जाती हैं। जब भी मैं सड़क पर किसी

एम्बुलेंस को सायरन बजाते हुए गुज़रते देखता हूँ, तो मेरा हाथ अपने आप जुड़ जाते हैं और दिल से एक ही आवाज़ निकलती है— "हे ईश्वर! मेरी ज़िंदगी के भले दो मिनट कम कर दे, पर इस इंसान को सलामत रखना। इसे वक्त पर अस्पताल पहुँचा देना ताकि इसकी साँसें न टूटें।" शायद यही वह पल होता है जब मैं अपनी 'इंसानियत' से रूबरू होता हूँ।

एक 'अच्छी ज़िंदगी' की परिभाषा

मैंने बहुत सोचा, बहुत आत्म-मंथन किया कि आखिर मुझे अपनी लाइफ से चाहिए क्या? क्या अंतहीन सुख-सुविधाएँ ही मंज़िल हैं? या फिर कुछ और? लंबे विचार के बाद मुझे जवाब मिला। मैं दरअसल एक 'अच्छी ज़िंदगी' चाहता हूँ।

अच्छी ज़िंदगी का मतलब ऐशो-आराम नहीं, बल्कि एक ऐसा जीवन है जिसमें मैं अच्छे कामों के ज़रिए लोगों के दिलों में अपनी जगह बना सकूँ। मैं चाहता हूँ कि जब मैं इस दुनिया से जाऊँ, तो जो भी मुझसे मिला हो, चाहे वह मेरा अजीज हो या कोई राहगीर, वह मुस्कुराकर यह कह सके— "वह आदमी सच में मेरा अपना था।" मैं अपनी यादों की एक ऐसी विरासत छोड़ना चाहता हूँ जो लोगों को सुकून दे सके।

जीवन की पिच पर संघर्ष का खेल

मेरा जीवन क्रिकेट की उस पिच की तरह रहा है जहाँ गेंदबाज़ (वक़्त) लगातार गेंदें फेंकता रहता है। मेरे जीवन में आई कहानियाँ और किस्से कभी बहुत सुखद थे, तो कभी बेहद कड़वे और डरावने। लेकिन मैंने तय किया था कि चाहे गेंद कैसी भी आए, मैं अपनी पिच पर डटकर खड़ा रहूँगा।

जब मुश्किलों की 'बाउंस बॉल' आई, तो मैंने उसे शालीनता से जाने दिया। जब संघर्ष की गेंद आई, तो मैंने उसे 'डिफेंस' किया। मैं आज भी उसी पिच पर अपने बल्ले के साथ तैयार खड़ा हूँ। मैं उस एक गेंद की तलाश में हूँ, उस एक मौके के इंतज़ार में हूँ, जिसे मैं बाउंड्री के पार पहुँचा सकूँ। मेरी मेहनत मेरा बल्ला है और मेरी उम्मीद मेरी ताकत। मैं चाहता हूँ कि मेरी यह डटे रहने की ज़िद आप सबको भी प्रेरित करे, ताकि आप भी अपने जीवन के मैदान में कभी हार न मानें।

शिक्षक का अनुभव और जीवन के सबक

अतीत में मैं एक शिक्षक भी रह चुका हूँ। पढ़ाने का पेशा मुझे बहुत प्रिय रहा। शिक्षक के रूप में मैंने सिर्फ किताबों का ज्ञान नहीं बाँटा, बल्कि यह सीखा कि जटिल से जटिल बात को सरल कैसे बनाया जाता है ताकि वह सीधे छात्र के दिल और दिमाग में उतर सके। आज मैं वही सरलता अपने जीवन के अनुभवों को साझा करने में इस्तेमाल कर रहा हूँ।

मैंने अपनी ज़िंदगी में ऐसी-ऐसी घटनाओं और हादसों का सामना किया है, जो किसी को भी तोड़ सकती थीं। लेकिन मैं टूटा नहीं, क्योंकि मेरे साथ प्रार्थनाओं की एक अदृश्य शक्ति थी। मेरी माँ की ममता, मेरे भाई-बहनों का भरोसा और मेरी पत्नी का अटूट साथ—इन सबने मिलकर मुझे वह शक्ति दी कि मैं हर मुश्किल का डटकर सामना कर सका।

अनुभवों की पोटली

आज जो कहानियाँ मैं आपसे साझा कर रहा हूँ, वे सिर्फ शब्द नहीं हैं। वे मेरे जीवन के वे कड़वे और मीठे अनुभव हैं, जो मेरे लिए किसी 'लाइफ लेसन' से कम नहीं हैं। मैंने इन अनुभवों से गिरकर संभलना, रोकर मुस्कुराना और हारकर जीतना सीखा है।

जीवन बस एक ही बार मिला है। इसे माँगने में नहीं, बल्कि 'जीने' और 'बाँटने' में बिताइए। मेरी कहानियाँ आपको यह एहसास कराती रहेंगी कि चाहे तूफ़ान कितना भी बड़ा क्यों न हो, अगर आप अंदर से मज़बूत हैं और आपकी नीयत साफ है, तो ईश्वर भी आपके साथ खड़ा होता है।

उम्मीद है कि मेरा यह सफर आपको अपनी ज़िंदगी को एक नए नज़रिए से देखने की हिम्मत देगा। याद रखिएगा, आप अकेले नहीं हैं; हम सब अपनी-अपनी पिच पर संघर्ष कर रहे हैं, बस डटे रहना ज़रूरी है।

सादर,

सागरकुमार रमणीकलाल

अनुक्रमणिका

मेरे पिताजी को समर्पित iii

प्रस्तावना v

आरंभ vii

अनुक्रमणिका xi

मेरी दुनिया के 'अनमोल नमूने' 1

मेरी कहानी के पात्र... 2

“मीनल”... 8

आधी रात का सन्नाटा और वह सिसकती हुई आवाज़ 11

कहानी विस्तार से... 17

एक व्यक्तिगत श्रद्धांजलि: प्यारी मीनल के नाम 96

मेरी दुनिया के 'अनमोल नमूने'

कहानी शुरू करने से पहले, मैं चाहता हूँ कि आप उन लोगों से मिल लें जिन्होंने मेरी ज़िंदगी की इस फिल्म में रंग भरे हैं। अपने दिमाग में एक तस्वीर बना लीजिए, क्योंकि ये कोई आम लोग नहीं हैं। ये वो 'नमूने' हैं, जिनके होने मात्र से ही माहौल बदल जाता था। और हाँ, इस महफ़िल का सबसे बड़ा नमूना... मैं खुद था।

मेरे दोस्तों की टोली ऐसी थी कि अगर आज भी उनका नाम कहीं लिखा हुआ दिख जाए, तो मेरे चेहरे पर अपने आप हँसी आ जाती है। चलिए, एक-एक करके इन किरदारों को करीब से देखते हैं:

1. मैं (सागरकुमार): 'द बिग सैम्पल'

जैसा कि मैंने कहा, अपनी इस कहानी का सबसे बड़ा नमूना मैं ही हूँ। सपनों की दुनिया में खोया रहने वाला, पेंटिंग और कहानियों का शौकीन, जो असल ज़िंदगी की 'प्रैक्टिकल' बातों से कोसों दूर रहता था। अपनी ही धुन में रहने वाला एक ऐसा इंसान, जिसे अक्सर लोग 'अजीब' समझते थे, पर मेरा दिल हमेशा साफ़ रहा।

2. उमा: मेरी हिम्मत, मेरी 'होम मिनिस्टर'

मेरी पत्नी, श्रीमती उमा। वह इस पागलपन भरी दुनिया में इकलौती 'सेंसिबल' इंसान है। उसने न केवल मेरे सारे किस्से सुने हैं, बल्कि उन बेवकूफियों को झेला भी है। अगर उमा न होती, तो शायद ये कहानियाँ कभी कागज़ पर नहीं उतर पातीं। वह मेरी सबसे बड़ी क्रिटिक भी है और मेरी सबसे बड़ी ताकत भी।

मेरी कहानी के पात्र...

मेरी 'राक्षस टोली' का महा-पुराण: वो नमूने, जिन्होंने ज़िंदगी को ज़िंदाबाद बनाया

किताबें अक्सर नायकों (Heroes) के बारे में लिखी जाती हैं, लेकिन मेरी यह किताब उन 'नमूनों' के बारे में है जिन्होंने मुझे जीना सिखाया। इंजीनियरिंग की पढ़ाई तो बस एक बहाना था, असली मकसद तो उन चार-पाँच सालों में उन यादों को बटोरना था जो आज 2026 में लीसेस्टर की इस ठंडी शाम में मेरे कमरे को गर्माहट दे रही हैं।

जब मैं अपनी इस 'राक्षस टोली' के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे समझ नहीं आता कि शुरुआत कहाँ से करूँ। क्या उस दिन से, जब हम पहली बार मिले थे? या उस रात से, जब हमने पहली बार साथ में वो 'नंगी होली' खेली थी? चलिए, एक-एक करके इन किरदारों की परतें खोलते हैं। अपने दिल और दिमाग की खिड़कियाँ खुली रखिएगा, क्योंकि ये किरदार सीधे आपके भीतर प्रवेश करने वाले हैं।

1. भरत: मेरा 'छोटा भाई', मेरा 'बड़ा गुरु'

भरत के बारे में लिखना मेरे लिए खुद के एक हिस्से के बारे में लिखने जैसा है। वह मैकेनिकल इंजीनियरिंग का छात्र था, लेकिन उसका दिमाग किसी सुपर-कंप्यूटर से कम नहीं था। दुबला-पतला शरीर, चश्मे के पीछे चमकती तेज़ आँखें और चेहरे पर एक ऐसी मुस्कान जो देखते ही बता देती थी कि इसके दिमाग में कोई न कोई 'मैथमेटिकल कांड' चल रहा है।

भरत और मेरा रिश्ता बहुत पुराना है। हम दोनों 'नवोदय विद्यालय' की उपज हैं। जो लोग नवोदय से पढ़े हैं, वे जानते हैं कि वहाँ का अनुशासन और वहाँ की दोस्ती इंसान को फौलाद बना देती है। मैं जब 12वीं में था, तब भरत 9वीं में था। वह मेरा जूनियर था, लेकिन उसकी समझदारी अक्सर मुझसे बड़ी होती थी। हम एक ही

हॉस्टल में रहते थे, एक ही मेस का खाना खाते थे और शायद इसीलिए हमारे संस्कार एक जैसे हो गए थे।

जब हम कॉलेज में मिले, तो हमारी दोस्ती 'जिगरी' वाली श्रेणी में आ गई। भरत के पास उस दौर में लैपटॉप होना किसी चमत्कार से कम नहीं था। वह लैपटॉप हमारा 'सिनेमा हॉल' था। शनिवार की रातों को जब वार्डन सो जाता था, तब हम सब भरत के बिस्तर के चारों ओर दुबक कर बैठ जाते और कोई न कोई हॉरर या कॉमेडी फिल्म देखते। भरत जितना पढ़ाई में सीरियस था, उतना ही मस्ती में अव्वल। अगर मुझे कोई परेशानी होती, तो भरत उसे अपनी परेशानी बना लेता था। वह मेरा 'प्रॉब्लम सॉल्वर' था। चाहे वो असाइनमेंट की गुत्थी हो या दिल का कोई मामला, भरत के पास हर चीज़ का एक 'लॉजिकल सॉल्यूशन' होता था।

2. मयूर: वो खामोश तूफ़ान और 'मिल्खा' की रफ़्तार

मयूर—इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग का वो सितारा जिसके बाल उसकी पहचान थे। कंधे तक झूलते लंबे बाल और चेहरे पर हमेशा छाई रहने वाली एक अजीब सी शांति। मयूर को देखकर कोई नहीं कह सकता था कि यह लड़का जब मैदान पर उतरता है, तो हवा से बातें करता है।

वह भी नवोदय से था। जब मैं 12वीं में था, मयूर 10वीं में मेरा जूनियर था। मयूर की सबसे बड़ी खासियत थी उसकी ईमानदारी। हम सब 'दारूबाज़ों' की टोली में वह इकलौता 'शरबत प्रेमी' था। हम बोतलों के ढक्कन खोलते, और वह अपनी चाय का कप थामे मुस्कुराता रहता। लेकिन उसकी यह सादगी धोखा थी—मयूर हमारी टोली का 'न्यूज़ रिपोर्टर' था। कॉलेज में किसके बीच लफड़ा हुआ है, कैंटीन में आज क्या नया बना है, या कौन सा प्रोफेसर आज गुस्से में है—मयूर के पास हर खबर होती थी।

मयूर की दौड़ का क्या कहना! वह जब भागता था, तो लगता था कि ज़मीन उसके पैरों के नीचे छोटी पड़ रही है। हम उसे 'मिल्खा' कहते थे। लेकिन अफ़सोस, उसे अपनी प्रतिभा दिखाने के मौके बहुत कम मिले। आज भी जब मैं पुरानी तस्वीरें देखता हूँ, तो मुझे डर लगता है कि कहीं मयूर के पास उस रात का वीडियो न हो,

जब हमने होली के जोश में सब कुछ भुलाकर डांस किया था। वह हमारी यादों का 'कस्टोडियन' है।

3. कांजी: मेरा 'छोटा उस्ताद' और क्लास का सहारा

कांजी केमिकल इंजीनियरिंग का वो छात्र था जिसे छोटा कहना उसकी तौहीन होगी। कद में भले ही वह छोटा था, लेकिन उसकी शख्सियत बहुत बड़ी थी। वह मेरा बेंच पार्टनर था। क्लास में जब प्रोफेसर साहब अपनी धुन में लेक्चर देते और मेरे सिर के ऊपर से सब निकल जाता, तब मैं कांजी की तरफ देखता था। कांजी बस एक बार मुस्कुराता और इशारे में कहता—"चिंता मत कर, बाद में समझा दूँगा।"

कांजी सिर्फ मेरा दोस्त नहीं था, वह मेरा 'पर्सनल ट्यूटर' था। उसे किताबें पढ़ने का ऐसा जुनून था कि कभी-कभी मुझे लगता था कि इसके खून में स्याही बहती है। मेरा कोई भी प्रोजेक्ट हो या लैब की कोई मुश्किल रीडिंग, कांजी हमेशा ढाल बनकर खड़ा रहता। उसकी सबसे बड़ी खूबी यह थी कि वह काम के वक्त काम और मस्ती के वक्त असली 'राक्षस' बन जाता था।

4. अजय: देसी ठाठ और चप्पलों की गूँज

अजय—केमिकल इंजीनियरिंग का वो हीरा जिसे तराशने की ज़रूरत कभी महसूस नहीं हुई। वह जैसा था, वैसा ही शानदार था। पूरी तरह देसी। उसे फैशन से कोई लेना-देना नहीं था। हम जहाँ ब्रांडेड कपड़ों की बातें करते, अजय अपनी पुरानी टी-शर्ट और घिसी हुई चप्पलों में खुश रहता।

अजय की पहचान उसकी चप्पलों की आवाज़ से होती थी। वह कमरे में आने से पहले ही अपनी मौजूदगी दर्ज करा देता था। "घिस-घिस-घिस"—और हम समझ जाते कि अजय आ गया। वह पढ़ाई में थोड़ा कच्चा था, लेकिन मस्ती में उसका कोई सानी नहीं था। वह आलस का देवता था। जब सारा काम ख़त्म हो जाता, जब सारी साज़िशें रची जा चुकी होतीं, तब अजय नींद से जागता और पूछता—"भाई, कुछ मदद चाहिए क्या?" उसकी इसी मासूमियत और लेटलतीफी पर हमें प्यार आता था।

5. निर्मित: छक्कों का सौदागर और 'तुरुप का इक्का'

निर्मित आईसी इंजीनियरिंग का वो भोला लड़का था जिसके हाथ में जब बल्ला आता था, तो वह साक्षात 'विनाशक' बन जाता था। निर्मित और भरत की नोकझोंक हमारे हॉस्टल का 'डेली सोप' थी। दोनों छोटी-छोटी बातों पर लड़ते और फिर अगले ही पल साथ में चाय पी रहे होते।

निर्मित का गणित (Maths) इतना खतरनाक था कि वह हवा के दबाव और बल्ले के कोण को जोड़कर छक्का मारता था। जब क्रिकेट के मैच में हालत खराब होती, जब गेंदें कम और रन हिमालय जैसे होते, तब मैं निर्मित को कहता—"जा भाई, लाज रख ले।" और निर्मित जाता, दो-चार लंबे छक्के जड़ता और बड़े आराम से वापस आकर कहता—"हो गया भाई, अब चाय पिला।" वह मेरा सबसे बड़ा भरोसा था।

6. निशांत और श्लोक: मेरे 'पीने वाले साथी'

निशांत (सिविल) और श्लोक (EC)—इन दोनों के बिना मेरी शामें अधूरी थीं। निशांत, जिसे हम 'कलवा' कहते थे, अपनी यो-यो स्टाइल और चिकन के प्रति अपने प्रेम के लिए मशहूर था। वह बहुत ही भावुक इंसान था। अगर मैं उसे रात के 2 बजे भी फोन करके कहता कि "भाई, ज़रूरत है", तो वह बिना कपड़े बदले पहुँच जाता।

वहीं श्लोक... वह तो बदमाशियों की यूनिवर्सिटी का वाइस-चांसलर था। रजनीगंधा चबाते हुए उसके खराब दाँत और उसकी वो 'कातिलाना' हँसी! श्लोक के पास हमेशा अपनी बाइक होती थी और उसके पास हमेशा कोई न कोई ऐसी योजना होती थी जिससे हम आफत में पड़ सकें। वह कॉलेज से ज़्यादा कैंटीन या बाहर पान के गल्ले पर मिलता था। अगर कॉलेज में कोई बड़ा कांड हुआ है, तो पक्का उसके पीछे श्लोक का शातिर दिमाग ही होगा।

7. कल्पेश, पारस और भौमिक: गैंग के अन्य स्तंभ

कल्पेश हमारी गैंग का 'अंडरवर्ल्ड डॉन' था। सिविल इंजीनियरिंग का ये छात्र पढ़ने में भले ही पीछे हो, लेकिन 'जुगाड़' में सबसे आगे था। पारस और भौमिक वो दो लोग थे जो अक्सर बलि का बकरा बनते थे। पारस बहुत सीधा और बेचारा था, जबकि भौमिक अपनी मासूमियत और जानवरों के प्रति प्रेम के कारण फँस जाता था।

8. कॉलेज की वो लड़कियाँ: धृसा और वैशाली

धृसा हमारी क्लास की वो 'अमीर और पढ़ाकू' लड़की थी जो कार से आती थी और हमेशा किताबों में डूबी रहती थी। उसके बॉयज़-कट बाल उसकी पहचान थे।

वहीं वैशाली... मेरे डिप्लोमा के दिनों का वो पहला क्रश। भोली, मासूम और ख्याल रखने वाली। वह मेरे लिए खाना लाती थी, मेरी चिंता करती थी। आज 2026 में, जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो उसका धुंधला सा चेहरा बस एक मीठी याद की तरह उभरता है।

9. कैंटीन के साथी और अन्ना का गल्ला

कुन्हलभाई और दिनेशभाई, जो हमारी 'राक्षस टोली' को खिलाते-पिलाते थे और कभी-कभी उधार की सिगरेट और दारू का इंतज़ाम भी कर देते थे। और अंत में 'अन्ना' (सूरज)—केरल का वो छोटा सा बॉडी-बिल्डर जिसकी चाय और पान के बिना हमारा दिन पूरा नहीं होता था।

10. रावण काका: एक अविस्मरणीय किरदार

रावण काका—एक ऐसा इंसान जिसे भूलना नामुमकिन है। छोटा कद, गुब्बारे जैसा पेट और हर बात पर गालियों की बौछार। जब वे अपनी पुरानी साइकिल पर गाँव से आते थे, तो मंज़र देखने लायक होता था। साइकिल पर बैठने के लिए उन्हें किसी पत्थर या ऊँची जगह का सहारा लेना पड़ता था। वे हमारी कॉलेज लाइफ के वो 'मस्कॉट' थे जिनके बिना हमारी मस्ती अधूरी थी।

11. मीनल: वह 'अनजानी' आवाज़

वह किरदार जिससे मैं कभी मिला नहीं, जिसे मैंने कभी देखा नहीं। पर जिसकी उस भारी और मर्दाना आवाज़ ने मेरी रातों की नींद और दिन का सुकून छीन लिया था। वह इस कहानी का सबसे बड़ा सस्पेंस है

12. प्रिया...

मीनल की छोटी बहन। बहुत ही प्यारी। हर बात की जल्दी। पटर पटर बोलने वाली।

13. धवल, रौनक, योगेश, ध्रुविन, क्रूज़, अजय, वीरल, शैशव, मयंक, जिशांत, अंकित, क्रुणाल, प्रितेश, विशाल या राजू सारे कॉलेज या हॉस्टल के साथी।

“मीनल” ...

वह रात, वह आवाज़ और एक अनकहा सस्पेंस

तारीख: 13 अप्रैल, 2012

स्थान: अहमदाबाद

अहमदाबाद की अप्रैल वाली गर्मी अपनी पूरी रंगत पर थी। सुबह के 11 बज रहे थे, लेकिन सूरज की तपिश खिड़की के पर्दों को चीरकर कमरे के भीतर अपनी मौजूदगी दर्ज करा रही थी। मेरी आँखें भारी थीं, जैसे पलकों पर किसी ने सीसा भर दिया हो। आलस से भरा बदन और एक अजीब सी बेचैनी... मैं अचानक हड़बड़ाकर उठ बैठा।

पूरा शरीर पसीने से तर-बतर था। माथे पर पसीने की बूंदें ऐसे चमक रही थीं जैसे कोई डरावना सपना देखकर जागा हूँ। मैंने अपने कांपते हाथों से माथा पोंछा और सबसे पहले अपने तकिए के आसपास हाथ मारा। फोन गायब था।

मेरी पुरानी आदत थी, सोते समय फोन अक्सर हाथ से छूटकर बिस्तर के नीचे चला जाता था। मैंने नीचे झुककर अंधेरे में हाथ मारा, तो उंगलियों को उस ठंडी प्लास्टिक का अहसास हुआ। फोन बाहर निकाला, तो उसकी स्क्रीन की रोशनी चुभने वाली थी। धड़कते दिल के साथ मैंने 'कॉल हिस्ट्री' (Call History) खोली। मन ही मन प्रार्थना कर रहा था कि काश! जो कल रात हुआ, वह महज़ एक बुरा सपना हो।

लेकिन नहीं... स्क्रीन पर वो नंबर साफ चमक रहा था। कल रात की वो लंबी बातचीत कोई मज़ाक नहीं थी, कोई वहम नहीं था। वह हकीकत थी। उस नंबर को देखते ही मेरा माथा भन्ना गया। यादों का एक बवंडर दिमाग में घूमने लगा।

कल रात का वो किस्सा...

हुआ यूँ कि कल रात, जब पूरी दुनिया सो रही थी और सन्नाटा इतना गहरा था कि घड़ी की टिक-टिक भी शोर लग रही थी, मेरा फोन थरथराया। आधी नींद में मैंने बिना नंबर देखे कॉल उठा लिया। मुझे लगा शायद 'राक्षस टोली' का कोई नमूना होगा जो दारू के नशे में किसी नाले में गिरा होगा या किसी कांड की योजना बना रहा होगा।

लेकिन फोन के दूसरी तरफ से जो आवाज़ आई, उसने मेरी नींद एक झटके में उड़ा दी।

वह एक लड़की की आवाज़ थी... लेकिन इंतज़ार करिए, यह कोई वैसी आवाज़ नहीं थी जैसी हम फिल्मों में सुनते हैं या जैसा लड़कों को इम्प्रेस करने के लिए लड़कियाँ निकालती हैं। वह आवाज़ बेहद भारी थी, गहरी थी और सच कहूँ तो 'मर्दाना' पुट लिए हुए थी।

"हेलो..." दूसरी तरफ से बस इतना कहा गया।

मुझे लगा मेरा कोई दोस्त, शायद श्लोक, **मयूर, भरत** या **निर्मित**, मेरी 'फिरकी' ले रहा है। आवाज़ बदलकर मुझे बेवकूफ बनाने की कोशिश की जा रही है।

"अरे भाई, जो भी है, सीधा बोल! इतनी घटिया आवाज़ निकालने की क्या ज़रूरत है?" मैंने चिढ़ते हुए कहा था।

लेकिन सामने से कोई हँसी नहीं आई। न ही कोई गाली। बस एक खामोशी थी और फिर वही भारी आवाज़— "शायद यह रॉन्ग नंबर है, लेकिन... क्या आप मेरी बात सुनेंगे?"

उस पल मुझे अहसास नहीं था कि यह 'रॉन्ग नंबर' मेरी ज़िंदगी का सबसे 'राइट मोड़' बनने वाला है। उस अजनबी लड़की ने अपना नाम बताया— 'मीनल'।

आज सुबह 11 बजे, जब मैं उस कॉल की ड्यूरेशन (समय) देख रहा था, तो मुझे यकीन नहीं हो रहा था कि हम घंटों बात करते रहे। वह कौन थी? उसकी आवाज़

ऐसी क्यों थी? और सबसे बड़ा सवाल—उसने मुझे ही क्यों चुना अपनी बातें कहने के लिए?

अहमदाबाद की उस तपती दोपहर में, बिस्तर पर बैठे हुए मुझे सिहरन महसूस हो रही थी। वो 16 साल पहले का साल 2012... और वो नाम 'मीनल'। कहानी अब शुरू होने वाली थी।

आधी रात का सन्नाटा और वह सिसकती हुई आवाज़

12 अप्रैल की ढलती रात, समय: लगभग 1:45 बजे

इंजीनियरिंग हॉस्टल की रातें कभी सोती नहीं हैं। जब दुनिया के लिए सूरज ढल जाता है, तब हमारे जैसे 'राक्षसों' की दुनिया आबाद होती थी। उस रात भी माहौल कुछ अलग नहीं था। हम सब दोस्त—मैं, भरत, मयूर, निर्मित, अजय और कांजी—दूसरी मंज़िल की उस संकरी बालकनी में जमे हुए थे। हवा में सिगरेट के धुएँ और लड़कों के बेपरवाह ठहाकों का मिश्रण था।

सब अपनी-अपनी डींगें हांक रहे थे। कोई अपनी अधूरी प्रेम कहानी सुना रहा था, तो कोई अगले दिन के वाइवा (viva) से बचने के जुगाड़ बता रहा था। मैं एक कोने में चुपचाप बैठा था। मेरी आदत थी, मैं अक्सर शोर के बीच खामोश हो जाता था। 'यूनो' के पत्तों का खेल अभी-अभी खत्म हुआ था, जिसमें मयूर ने सबको बुरी तरह हराया था और अब वह अपनी जीत का जश्न मना रहा था।

तभी, सन्नाटे को चीरते हुए कमरे के भीतर से किसी के आने की आहट हुई। हमने एक-दूसरे को इशारा किया। सब समझ गए— 'एलियन' आ गया है।

'एलियन' का स्वागत और वो अँधेरा कांड

पारस, जिसे हम प्यार से 'एलियन' कहते थे, बेचारा सीधा-सादा लड़का था, लेकिन हमारी बदमाशी का सबसे आसान शिकार भी। जैसे ही वह कमरे की दहलीज पर पहुँचा, किसी ने बिजली का स्विच गिरा दिया। पूरा कमरा घुप अँधेरे में डूब गया।

"पकड़ो साले को!" भरत की आवाज़ गूँजी।

फिर जो हुआ, वह किसी युद्ध से कम नहीं था। अँधेरे में हम सबको बस एक ही मकसद दिख रहा था—पारस की धुनाई। हाथ में जो आया, वही हथियार बन

गया। किसी ने लकड़ी का पुराना पेन फेंका, तो किसी ने 'इंजीनियरिंग ग्राफिक्स' की वो भारी-भरकम किताबें चलानी शुरू कर दीं। जूते, चप्पलें, कंबलों की मोटी-मोटी गाँठें—सब हवा में तैर रहे थे।

मैंने मयूर की जींस पैंट उठा ली थी, जो बालकनी की डोर पर सूख रही थी। मैंने उस जींस को गोल घुमाया और अँधेरे में अंदाज़े से वार करना शुरू किया। पारस का रंग वैसे ही गहरा काला था, और ऊपर से अँधेरा—वह दिख ही नहीं रहा था, बस उसकी कराहने की आवाज़ें आ रही थीं। मयूर और भरत तो जैसे सदियों की खुन्नस निकाल रहे थे।

अचानक लाइट जली। कमरे का नज़ारा देखकर हम सब लोट-पोट हो गए। पारस बीच में खड़ा था, उसके बाल बिखरे हुए थे और चेहरे पर धूल जमी थी। कांजी उसे देखकर बोला— "अबे ओए! तू इंसान है या मंगल ग्रह से आया कोई नमूना? ज़रा अपनी शकल देख आईने में!"

हॉस्टल की वो हँसी शायद तीसरी मंज़िल तक सुनाई दी होगी। लेकिन उस हँसी के पीछे मेरे मन के किसी कोने में एक कसक थी। मस्ती खत्म हुई, सब थके-हारे अपने बिस्तरों की ओर बढ़े। मैंने सबको 'गुड नाइट' कहा और नीचे अपने कमरे की ओर चल पड़ा।

तन्हाई, वैशाली और वो 'डिलीट' किया हुआ मैसेज

मैं अपने रूम के सामने पहुँचा, लेकिन भीतर जाने का मन नहीं हुआ। मैं उस सुनसान गैलरी की ओर मुड़ गया जो हॉस्टल के पिछले हिस्से में थी। यह मेरी पसंदीदा जगह थी। यहाँ नेटवर्क का सिग्नल पूरा आता था और सबसे बड़ी बात—यहाँ 'शांति' थी।

मैं वहाँ लोहे की रेलिंग के पास बैठ गया। ठंडी हवा के झोंके अहमदाबाद की उस तपती दोपहर की थकान मिटा रहे थे। मैंने फोन निकाला। उंगलियाँ खुद-ब-खुद पुराने फोल्डर की तरफ गईं। वैशाली... मेरी 'एक्स'।

सुना था उसकी शादी एक साल पहले ही हो गई थी। वह अब किसी और की दुनिया का हिस्सा थी, लेकिन मेरी दुनिया आज भी उसी मोड़ पर थमी थी। मैंने उसे एक मैसेज टाइप किया: "क्या तुम खुश हो?"

टाइप करने के बाद मैंने उसे सेंड नहीं किया। मुझे पता था कि इसका कोई मतलब नहीं है। मैंने उसे डिलीट कर दिया। पिछले एक साल से मैं यही कर रहा था—लिखना और मिटाना। दिल में एक अजीब सी आग जलती थी, जिसे बुझाने के लिए मैं अक्सर यहाँ अकेला बैठता था।

मैंने हेडफोन लगाए। 90 के दशक के उन उदास गानों की लिस्ट बजने लगी जो ज़ख्मों पर नमक छिड़कने का काम करते थे। मैं सामने की खाली सड़क और दूसरे हॉस्टल की बुझती लाइटों को देख रहा था। अचानक, मेरे हाथ में रखे फोन ने थरथराहट (vibration) शुरू की।

वो रहस्यमयी कॉल: 13 अप्रैल 2012, रात के 2:10 बजे

स्क्रीन पर एक 'अनजान नंबर' (Unknown Number) चमक रहा था। रात के दो बजे कॉल? मुझे लगा शायद कोई दोस्त फिरकी ले रहा है या कोई स्पैम कॉल है। मैंने चिढ़कर कॉल काट दिया और दोबारा सामने देखने लगा।

लेकिन वह नंबर शांत नहीं हुआ। कुछ ही सेकंड बाद फिर से वही नंबर। इस बार मेरे मन में एक अजीब सी घबराहट हुई। कहीं वैशाली तो नहीं? क्या उसने मेरा मैसेज देखा और अब वो कॉल कर रही है? इसी उम्मीद में मैंने अचानक कॉल रिसीव कर लिया।

"हेलो..." मैंने धीमी आवाज़ में कहा।

सामने से कोई जवाब नहीं आया। बस तेज़-तेज़ साँसें लेने की आवाज़ आ रही थी। और फिर... अचानक एक सिसकी गूँजी।

एक लड़की के रोने की आवाज़। वह कोई सामान्य रोना नहीं था, वह ऐसा विलाप था जैसे किसी का सब कुछ लुट गया हो। वह फूट-फूटकर रो रही थी।

"हेलो? कौन है आप? क्या हुआ?" मैंने घबराकर पूछा।

मेरा दिमाग सुन्न हो गया था। रात के इस पहर में, एक अनजान लड़की का रोते हुए कॉल आना किसी के भी रोंगटे खड़े कर सकता था। मुझे लगा शायद यह कोई प्रैंक (prank) है, या जैसा कि कुछ लोग कहते हैं, कोई 'अतृप्त आत्मा' या चुड़ैल। लेकिन नहीं, उस रोने में जो दर्द था, वह बहुत ही 'इंसानी' था।

"बचा लो... प्लीज़..." दूसरी तरफ से एक कमज़ोर, भारी और डरी हुई आवाज़ आई।

वह आवाज़... वह मीनल थी। 13 अप्रैल 2012 की वह रात, मेरी ज़िंदगी का वो मोड़, जहाँ से मेरी मासूमियत पीछे छूट गई और एक ऐसा सफर शुरू हुआ जिसे आज 16 साल बाद भी मैं हर रात याद करता हूँ। यह कोई भूतों की कहानी नहीं थी, यह एक ऐसी लड़की की दास्तान थी जिसकी आवाज़ आज भी मेरे कानों में गूँजती है।

एक खौफनाक सच और 19 साल की वो मासूमियत

तारीख: 13 अप्रैल, 2012 | समय: रात के 2:15 बजे

हॉस्टल की उस गैलरी में जहाँ थोड़ी देर पहले तक मैं अपनी पुरानी यादों में खोया था, अब वहाँ सन्नाटा इतना गहरा हो गया था कि मुझे अपनी धड़कनें साफ़ सुनाई दे रही थीं। फोन कान से सटा था और दूसरी तरफ से आ रही सिसकियों ने मेरे हाथ-पाँव ठंडे कर दिए थे।

"हेलो? आप कौन हैं? क्यों रो रही हैं?" मैंने दोबारा पूछा, मेरी आवाज़ में घबराहट साफ़ थी।

सामने से एक लंबी सिसकी आई, जैसे वह लड़की अपनी हिम्मत जुटा रही हो। फिर वह भारी और रूँधी हुई आवाज़ गूँजी, जिसने मेरे पैरों के नीचे से ज़मीन खिसका दी।

"वह... वह मेरा फोन नहीं उठा रहा। मैं कब से उसे कॉल कर रही हूँ, मैसेज कर रही हूँ... लेकिन वह कोई जवाब नहीं दे रहा। मेरा बॉयफ्रेंड मुझसे बात नहीं करना चाहता..."

मैंने गहरी साँस ली। लगा शायद कोई आम ब्रेकअप का मामला होगा। कॉलेज लाइफ में ऐसे 'रॉन्ग नंबर' और ऐसी रोती हुई लड़कियाँ अक्सर मिल जाती थीं। मैंने सोचा शायद उसे समझा-बुझाकर कॉल काट दूँगा।

"देखिए, शांत हो जाइए। रात बहुत हो गई है, शायद वह सो गया होगा। आप सुबह बात कर लेना..." मैंने उसे सांत्वना देने की कोशिश की।

"नहीं! वह सो नहीं रहा, वह मुझे नज़रअंदाज़ कर रहा है!" वह चिल्लाई, और फिर उसके रोने की आवाज़ और तेज़ हो गई। "उसे अंदाज़ा भी नहीं है कि मैं किस दौर से गुज़र रही हूँ। मैं... मैं अभी सिर्फ 19 साल की हूँ। मेरी उम्र ही क्या है? और अब... अब मैं उसके बच्चे की माँ बनने वाली हूँ।"

वह वाक्य मेरे कानों में किसी बम की तरह फटा।

मैं सुन्न रह गया। मेरा दिमाग काम करना बंद कर चुका था। 19 साल की एक लड़की, आधी रात का वक्त, और यह इतना बड़ा खुलासा! 2012 का वह समय आज जैसा 'ओपन' नहीं था। समाज, परिवार और बदनामी का डर किसी भी इंसान को मार डालने के लिए काफी था।

"क्या... क्या कहा आपने?" मेरी आवाज़ बमुश्किल निकल पाई।

"मुझसे अब यह प्रेशर झेला नहीं जा रहा," वह सुबकते हुए बोली। "घरवाले, समाज, मेरा अपना भविष्य... सब धुंधला दिख रहा है। मुझे समझ नहीं आ रहा मैं कहाँ जाऊँ, किससे कहूँ। उसने मेरा साथ छोड़ दिया है। मैं अकेली पड़ गई हूँ। प्लीज़... मेरी बात सुन लीजिए, वरना मैं पागल हो जाऊँगी।"

उस रात उस गैलरी की ठंडी हवा भी मुझे झुलसाने लगी थी। वह लड़की, जिसका नाम 'मीनल' था (जैसा कि उसने बाद में बताया), वह मौत और ज़िंदगी के बीच खड़ी थी। उसकी आवाज़ में वह 'भारीपन' शायद उसी बोझ का था जो वह अपने दिल और कोख में दबाए बैठी थी।

मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मैं एक 'रॉन्ग नंबर' होने के नाते उसे क्या सलाह दूँ। क्या मैं उसे डाँटूँ? क्या मैं उसे सांत्वना दूँ? या क्या मैं चुपचाप फोन काट दूँ और इस झमेले से दूर हो जाऊँ?

लेकिन वह रोती हुई आवाज़... वह 'बचा लो' वाली पुकार... मुझे वहाँ से हिलने नहीं दे रही थी। 19 साल की उम्र में कोई इतना बड़ा बोझ कैसे सह सकता है? वह प्रेशर, वह समाज का डर—मुझे साफ़ महसूस हो रहा था कि वह लड़की किसी भी पल कोई गलत कदम उठा सकती है।

मैंने फोन को कसकर पकड़ा और गहरी सांस ली। "सुनो... शांत हो जाओ। मैं कहीं नहीं जा रहा। तुम बात करो, मैं सुन रहा हूँ। बस कोई गलत कदम मत उठाना।"

उस रात की वह बातचीत, जो एक 'गलत नंबर' से शुरू हुई थी, अब एक ज़िंदगी बचाने की जद्दोजहद बन चुकी थी। 13 अप्रैल की वह रात अब महज़ एक तारीख नहीं, एक इम्तिहान बन गई थी।

कहानी विस्तार से...

"रुको एक मिनट... मुझे थोड़ा संभलने दो। मैं उस दिन की पूरी कहानी बिल्कुल शुरू से सुनाता हूँ। समझ नहीं आ रहा कि कहाँ से शुरू करूँ... मन में डर है कि कहीं कोई छोटा सा हिस्सा भी छूट गया, तो शायद आप उस खौफ और बेचैनी को महसूस न कर पाएं जो मैंने झेली थी।

सच कहूँ तो आज भी जब उस रात का ख्याल जेहन में आता है, तो मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। शरीर में एक अजीब सी सिहरन दौड़ जाती है। पर ठहरिए, इससे पहले कि आप अपनी कल्पना के घोड़े दौड़ाएं, मैं एक बात साफ कर दूँ—यह कोई सुनी-सुनाई भूतों वाली कहानी नहीं है। मुझे पता है, आपमें से कुछ लोग पहले ही मन ही मन यह मान चुके होंगे कि आधी रात का वक्त, सुनसान सड़क और ऊपर से फोन पर एक रोती हुई लड़की की आवाज... मतलब पक्का कोई चुड़ैल या साया ही होगा!

लेकिन यकीन मानिए, आपका ऐसा सोचना न सिर्फ गलत होगा, बल्कि उस रात की असलियत के साथ नाइंसाफी भी होगी। हकीकत कभी-कभी कल्पना से कहीं ज्यादा डरावनी और पेचीदा होती है। मेरे लिए वह रात महज़ एक हादसा नहीं, बल्कि एक ऐसा गहरा जख्म है जिसे मैं चाहकर भी अपनी यादों से मिटा नहीं सकता। वो सन्नाटा, वो कँपकँपाती आवाज और वो मंजर... आज भी सब मेरी आँखों के सामने किसी डरावनी फिल्म की तरह घूमने लगता है।"

उस दिन की सुबह और हॉस्टल का वो गजब नज़ारा...

"दादाजी... ओ दादाजी...!" कोई पागलों की तरह गले फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा था। अभी मेरी नींद टूटी भी नहीं थी कि अचानक एक भारी-भरकम मोटी किताब किसी मिसाइल की तरह मेरे ऊपर आ गिरी। शायद उस 'कुंभकरण' को

जगाने का यही आखिरी रास्ता बचा था। और ये नेक काम करने वाला कोई और नहीं, मेरा परम मित्र कांजी था।

कांजी... नाम लेते ही मुझे दो चीजें याद आती हैं—एक तो उसकी पानी-पूरी खाने की रफ्तार और दूसरी हमारी वो अजीबोगरीब 'सुसु करने की रेस'। उसने अपना पूरा कॉलेज बैग मुझ पर दे मारा था ताकि मैं अपनी गहरी नींद से जाग सकूँ। जैसे ही मेरी आँखें खुलीं और मैंने दीवार घड़ी पर नज़र दौड़ाई, तो मेरे होश उड़ गए। सुबह के 11 बजने वाले थे! मेरे बाकी रूममेट्स तो कब के कॉलेज के लिए रफूचक्कर हो चुके थे।

मैंने बिजली की फुर्ती से अपना बेड ठीक किया, तकिये के नीचे से मोबाइल निकाला, तौलिया कंधे पर डाला और बाथरूम की तरफ सरपट दौड़ लगा दी। पर वहां पहुँचते ही जो मंजर देखा, उसने मेरी हिम्मत तोड़ दी। बाथरूम के बाहर लड़कों की इतनी लंबी कतार थी, मानो किसी लंगर में भूखों की फौज खड़ी हो। उसी भीड़ में मेरा ध्यान एक चेहरे पर गया—निशांत। वही निशांत, जो आगे चलकर मेरा सबसे करीबी यार बनने वाला था।

वो महाशय हाथ में ब्रश लिए, शरीर के एक खास हिस्से को खुजाते हुए बड़े इत्मीनान से खड़े थे। मैंने उससे थोड़ी-बहुत हंसी-मजाक की, उसकी खिंचाई की और फिर जैसे-तैसे अपनी बारी का इंतज़ार किया। जब अंत में मेरा नंबर आया, तो कसम से ऐसा एहसास हुआ जैसे मैंने कोई बहुत बड़ा 'मैदान मार लिया' हो। हॉस्टल में उन दिनों पानी की भयंकर किल्लत थी, फिर भी मैंने फटाफट ब्रश किया, नहाया और कॉलेज के लिए तैयार हो गया। कांजी तब तक मेरे कमरे में ही जमा हुआ था।

हम दोनों तैयार होकर हॉस्टल के गेट से बाहर निकल ही रहे थे कि रावल काका ने टोक दिया। रावल काका यानी हमारे हॉस्टल के वार्डन। उन्होंने हमें रोककर रजिस्टर में साइन (हस्ताक्षर) करने को कहा। मैंने रजिस्टर की तरफ देखते हुए थोड़ा गंभीर होकर कांजी से कहा, "देख भाई, आज तो इस साल का हिसाब कर ही देता हूँ (साइन कर ही देता हूँ)।"

इतना सुनना था कि वो हरामखोर कांजी अपनी गंदी सोच के साथ जोर-जोर से ठहाके मार कर हँसने लगा। उसे लगा मैं किसी और 'लेने' की बात कर रहा हूँ। उसकी उस कमीनी हंसी ने उस तनावपूर्ण सुबह को भी ठहाकों में बदल दिया।

कॉलेज की वो गलियाँ और 'भाभी' वाली मैडम...

हॉस्टल से कॉलेज तक का वो रास्ता... उफ़! वो हमारे दिन का सबसे सुनहरा वक्त होता था। रास्ते भर लड़कियों को 'ताड़ना' और उनके रिएक्शंस देखना हमारे लिए किसी एडवेंचर से कम नहीं था। लड़कियों को देखते ही हमारी अपनी एक अलग डिक्शनरी शुरू हो जाती थी—देसी सादगी वाली लड़की मतलब 'हमारी वाली' और मॉडर्न-वेस्टर्न लुक वाली मतलब सीधे 'IIT वाली'। जैसे ही कोई ग्रुप पास से गुजरता, कांजी जैसा कोई नमूना धीरे से 'माल' बुदबुदाता और फिर ऐसे घूम जाता जैसे उसने कुछ किया ही न हो। कांजी के लिए ये सब नया था, उसके चेहरे पर एक अजीब सी घबराहट थी। मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा और बड़े भाई वाले अंदाज में कहा, "बेटा डर मत, अभी तो इंजीनियरिंग शुरू हुई है, इसकी आदत डाल ले... यही असली सिलेबस है!"

जैसे ही हम कॉलेज की बिल्डिंग के पास पहुँचे, देखा कि क्लास के बाहर पहले से ही 'शिकारियों' की एक फ़ौज तैनात थी। मेरे जिगरी यार—अजय, जीशांत, रौनक, योगेश, ध्रुविन और क्रूज़—सब के सब कतार में खड़े होकर आने-जाने वाली लड़कियों का 'निरीक्षण' कर रहे थे।

मैंने पास जाकर चुटकी ली, "क्यों भाई, अकेले-अकेले ही सारा पुण्य कमाओगे क्या?"

सब एक साथ कोरस में बोले, "आ जा भाई, तू भी लाइन में लग जा, अभी तो बहुत स्कोप है!"

तभी एक लड़की हाथों में कुछ फाइल्स लिए बड़े सलीके से हमारे पास से गुजरी। मैंने जोश-जोश में हवाबाजी करते हुए कह दिया, "देख लो भाई, ये वाली तुम्हारी 'भाभी' है!" मेरी बात पूरी भी नहीं हुई थी कि ध्रुविन ने अपना सिर पीट लिया और धीमे से बोला, "अबे ओए, भाभी नहीं, वो हमारी नई 'मैडम' हैं!" इतना सुनते

ही पूरे ग्रुप में ठहाकों का ऐसा सैलाब आया कि मुझे अपनी शक्ल छुपाने की जगह नहीं मिली।

वहीं एक कोने में योगेश कुछ खोया-खोया सा था। उसके चेहरे पर टेंशन साफ दिख रही थी। बातों-बातों में पता चला कि उसे हॉस्टल रूम को लेकर कुछ लफड़ा हो गया था। मैंने कांजी की तरफ इशारा किया और योगेश को दिलासा देते हुए कहा, "भाई, तू टेंशन मत ले, अपुन है ना... कुछ न कुछ जुगाड़ बिठा ही लेंगे।"

अभी हम अपनी पंचायत कर ही रहे थे कि प्रोफेसर साहब की एंट्री हुई और हम सब भेड़-बकरी की तरह क्लास की ओर भागे। मेरी आदत थी कि क्लास में घुसते ही सबसे पहले अपनी नजरें उस 'टॉपर' लड़की पर डालता था। पर आज कुछ अलग हुआ... इससे पहले कि मैं उसे देखूँ, उसने मेरी तरफ देखा और एक कातिलाना 'स्माइल' पास कर दी। कसम से, दिल बाग-बाग हो गया! समझ नहीं आ रहा था कि आज सूरज किस तरफ से निकला है।

मैंने पीछे मुड़कर देखा तो 'लास्ट बेंच' आज खचाखच भरी थी। बैक-बेंचर्स की अपनी अलग ही हुकूमत होती है। मैं दूसरी बेंच ढूँढ ही रहा था कि फिर से मेरी नजर उस टॉपर लड़की पर पड़ी... और भाई साहब! वो अब भी मुझे ही देख रही थी। एक अजीब सा एहसास हुआ, जैसे पेट में तितलियाँ उड़ रही हों। अजय ने हाथ से इशारा किया तो मैं उसके पास जाकर बैठ गया, पर दिमाग में एक ही सवाल घूम रहा था—"आज अचानक ये चमत्कार कैसे?"

फिर अचानक याद आया... शायद हमारी जो पिछली बातचीत हुई थी, उसी की वजह से वो मुझे नोटिस कर रही थी। दरअसल, अगले दिन जब क्लास में रिजल्ट्स की चर्चा हुई, तो पता चला कि उसने हर सब्जेक्ट में मुझे पछाड़ दिया था, सिवाय एक के। और वो सब्जेक्ट था—'ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट' यानी HRM। उस सब्जेक्ट में मेरे नंबर उससे कहीं ज्यादा थे। जब उसे पता चला होगा कि इस 'बैक-बेंचर' ने उसे पीछे छोड़ दिया है, तो शायद वो यही जानने के लिए बेताब थी कि ये करिश्मा हुआ कैसे?

अब उसे कौन समझाए कि शेर चाहे भूखा हो, पर अपने इलाके में दहाड़ना नहीं भूलता। अगर शेर अपना खौफ ही न बना सके, तो फिर खाक का शेर! सच तो

ये था कि मैं खुद एक 'उड़ता तीर' लेकर यहाँ आया था। कहाँ मैं 'आर्ट्स' का सीधा-साधा स्टूडेंट और कहाँ ये 'साइंस और इंजीनियरिंग' की पेचीदा दुनिया। आज भी सोचता हूँ कि आखिर क्यों मैंने ये रास्ता चुना? पर शायद नियति को कुछ और ही मंजूर था।

क्लास खत्म होते ही मैंने अपनी किताबों को ऐसे अलविदा कहा जैसे बरसों की कैद से आज़ाद हुआ हूँ। अब मेरा एक ही लक्ष्य था-कॉलेज कैंटीन ! उस समोसे और चाय की खुशबू मुझे अपनी ओर किसी मैग्नेट की तरह खींच रही थी।

दोपहर का वो मंजर और कैंटीन की पुकार

कॉलेज की थका देने वाली क्लास जैसे ही खत्म हुई, बाहर सूरज अपनी पूरी तपिश बिखेर रहा था। पेट में भूख के चूहे नहीं, बल्कि पूरे हाथी दौड़ रहे थे। इंजीनियरिंग की पढ़ाई और ऊपर से वो उबाऊ लेक्चर्स—इंसान का दिमाग और पेट दोनों खाली कर देते हैं। मैंने अपना बैग कंधे पर टांगा और मन ही मन कैंटीन के उस समोसे और चाय का स्वाद महसूस करने लगा। हॉस्टल के दोस्त—भरत, मयूर और निर्मित—पहले ही कैंटीन पहुँच चुके थे और उनके लगातार आते कॉल्स मेरे मोबाइल को वाइब्रेशन मोड पर भी चीखने को मजबूर कर रहे थे।

मैं अभी कॉरिडोर की सीढ़ियां उतर ही रहा था कि अचानक एक साया मेरे सामने आकर खड़ा हो गया। वह वही 'टॉपर' लड़की थी। उसकी आँखों में एक अजीब सी शिकायत थी और चेहरे पर एक हल्की सी मुस्कान, जो शायद सिर्फ मेरे लिए ही थी।

"क्या हुआ? आजकल बहुत बड़े आदमी बन गए हो? मुझे इग्नोर क्यों कर रहे हो?" उसने सीधे मुद्दे पर आते हुए पूछा।

मैं थोड़ा सकपकाया। "नहीं-नहीं! पागल हो क्या? ऐसा कुछ भी नहीं है। तुम गलत समझ रही हो। असल में..." मैंने अपनी घड़ी की तरफ देखते हुए बात काटी, "मुझे बहुत तेज़ भूख लग रही है। हॉस्टल वाले कमीने कैंटीन में मेरा खून पीने को तैयार बैठे हैं। वो सब मेरा वेट कर रहे हैं।"

उसने मेरी बात सुनी, पर अनसुनी कर दी। उसने अपना हाथ पीछे किया और एक सुंदर सा टिफिन मेरी ओर बढ़ा दिया। "ये लो, इसे खा लो। भूखे पेट दिमाग नहीं चलता।"

वो फासला जो मैंने बनाया था...

मैंने टिफिन की ओर देखा, फिर उसकी ओर। मन में एक कशमकश चल रही थी। एक तरफ भूख थी और दूसरी तरफ वो डर, जो मुझे किसी भी करीबी रिश्ते से दूर भागने को मजबूर करता था। मैंने एक लंबी सांस ली और वो सब कह दिया जो पिछले कई दिनों से मेरे दिमाग में घूम रहा था।

"देखो... तुम्हारा और मेरा कोई मैच नहीं है," मैंने अपनी नजरें झुकाते हुए कहा। "तुम कहाँ और मैं कहाँ? तुम उन बड़ी कारों से उतरकर कॉलेज आती हो और मैं यहाँ धूल फांकता हुआ पैदल आता हूँ। तुम्हारा क्लास, तुम्हारा स्टेटस, सब कुछ अलग है। तुम एक मॉडर्न, शहर की पढ़ी-लिखी लड़की हो और मैं... मैं बस एक साधारण सा लड़का हूँ जो छोटे शहर से यहाँ सिर्फ एक डिग्री के पीछे भाग रहा है।"

मेरे शब्दों में कड़वाहट नहीं थी, बस एक कड़वी सच्चाई थी जो मैंने खुद के लिए बुन ली थी।

एक अनचाहा स्पर्श और पुराना ज़ख्म

जैसे ही मैं मुड़ने लगा, उसने अचानक मेरा हाथ पकड़ लिया। उसकी पकड़ में एक हक था, एक जिद थी। "वेट! पहले जरा साइड में आओ," उसने मुझे कॉरिडोर के एक कोने की ओर खींचा जहाँ भीड़ कम थी।

"पागल! वैसा कुछ भी नहीं है जैसा तुम अपने छोटे से दिमाग में सोच रहे हो। स्टेटस, कार, पैसा... ये सब तुम्हारी सोच में है, मेरी नहीं," उसने धीमे और संजीदा स्वर में कहा। "और सुनो, मेरा पहले से ही एक बॉयफ्रेंड है। मैं यहाँ तुमसे कोई रोमांस करने नहीं आई हूँ। हम सिर्फ दोस्त हैं और आगे भी दोस्त ही रहेंगे। बस!"

उसने 'दोस्त' शब्द पर जोर दिया था, लेकिन मैं जानता था कि जज्बात कभी बताकर नहीं आते। "नहीं, ऐसा नहीं होगा," मैंने उसकी बात काटते हुए कहा। "आज

दोस्ती है, कल ये कुछ और होगा। धीरे-धीरे जुड़ाव बढ़ेगा, लगाव होगा और फिर... फिर वही सब शुरू होगा जिसे मैं दोबारा नहीं झेलना चाहता।"

मेरे दिमाग में बिजली की तरह एक नाम कौंधा—वैशाली।

वैशाली के जाने के बाद मैंने अपनी ज़िंदगी के जिस अंधेरे दौर को देखा था, मैं उससे अभी-अभी बाहर निकला था। मैं फिर से उस टूटने वाली स्थिति में नहीं जाना चाहता था। "मैं अपनी एक्स... वैशाली को आज तक नहीं भूल पाया हूँ," मेरे मुँह से अचानक निकल गया।

वैशाली का जिक्र और एक नया मोड़

वैशाली का नाम सुनते ही वह चौंक गई। उसकी आँखों में अब उत्सुकता थी। उसे शायद उम्मीद नहीं थी कि इस 'मस्तीखोर' लड़के के अंदर इतना बड़ा राज दफन होगा। मैंने उसे संक्षेप में अपनी पूरी कहानी सुनाई। डिप्लोमा के वो दिन, दमन की वो लड़कियां, और कैसे मेरी पहली गंभीर रिलेशनशिप भी एक मासूम दोस्ती से ही शुरू हुई थी और फिर तबाही पर खत्म हुई।

उसी वक्त मेरे फोन की घंटी फिर बजी। भरत और मयूर के कॉल्स की बाढ़ आ गई थी। "मुझे जाना होगा, दोस्त गालियां दे रहे हैं," मैंने उससे पीछा छुड़ाने की कोशिश की।

"बाय!" कहकर मैं जैसे ही पलटा, उसने फिर टोक दिया। "सिर्फ 2 मिनट और... प्लीज़! मुझे तुम्हारी पूरी कहानी जाननी है। ऐसे अधूरा छोड़कर मत जाओ। अपना नंबर तो देते जाओ!"

"अभी नहीं... फिर कभी," मैंने मना किया।

लेकिन वो भी इंजीनियर की स्टूडेंट थी, हार मानना उसके डीएनए में नहीं था। उसने बड़े गुस्से वाले लुक के साथ एक पेन निकाला और मेरा हाथ लगभग खींचते हुए कहा, "ये लो पेन, और चुपचाप नंबर लिखकर जाओ। वरना यहाँ से हिलने नहीं दूँगी।"

मैंने हार मान ली। उसकी एक फाइल के कवर पर फटाफट अपना नंबर घसीटा और 'बाय... सी यू' कहकर कैंटीन की तरफ सरपट दौड़ लगा दी।

कैंटीन का शोर और कांजी की नाराजगी

जब मैं कैंटीन पहुँचा, तो नजारा देखने लायक था। भरत, मयूर और निर्मित गुस्से में लाल-पीले हो रहे थे। कांजी बगल में खड़ा होकर मुझे ऐसी गंदी-गंदी गालियां दे रहा था जो शायद किसी डिक्शनरी में भी न मिलें।

"साले, कहाँ मर गया था? हम यहाँ भूख से मर रहे हैं और तू वहां अपनी 'भाभी' के साथ पंचायत कर रहा है?" कांजी ने चिल्लाकर कहा।

मैंने उसे शांत करने की कोशिश की, "अरे भाई, बस कुछ जरूरी काम था।"

कांजी का मूह फुला हुआ था। "तू ही जा, मुझे भूख नहीं है," उसने नखरे दिखाए। मैंने उसके गले में हाथ डाला और उसे खींचते हुए बोला, "अबे चल ना कमीने... ज्यादा भाव मत खा।"

रास्ते में अजय भी मिल गया। अब हम तीन—मैं, कांजी और अजय—एक साथ कैंटीन के उस शोर-शराबे वाले माहौल में घुस गए। चारों तरफ प्लेटों के टकराने की आवाजें और लड़कों के ठहाके गूँज रहे थे। लेकिन मेरे दिमाग में अभी भी उस फाइल के कवर पर लिखा मेरा नंबर और उसकी वो 'स्माइल' घूम रही थी।

कैंटीन का 'झूठ' और दोस्तों की वो पुरानी फितरत

कैंटीन के करीब पहुँचते ही मैंने देखा कि मयूर, निर्मित और भरत गेट के बाहर ही खड़े हमारा इंतज़ार कर रहे थे। धूप तेज़ थी, पर उनके चेहरों पर एक अजीब सी शांति और एकाग्रता थी। मैंने पास जाकर हैरान होते हुए पूछा, "अबे ओए! तुम सब यहाँ बाहर धूप में क्या कर रहे हो? अंदर नहीं जाना क्या?"

भरत ने बड़े मासूम चेहरे के साथ झूठ का पुलिंदा खोल दिया, "अरे भाई, देख नहीं रहा कितनी भीड़ है? अंदर पैर रखने की भी जगह नहीं है, इसलिए हम तीनों यहाँ बाहर ताजी हवा में खड़े होकर तेरा वेट कर रहे हैं।"

मैं उनकी बातों में आ गया और जैसे ही खुद अंदर जाकर देखा, तो दंग रह गया! अंदर कैंटीन एकदम खाली पड़ी थी, बस इक्का-दुक्का लोग ही बैठे थे। मुझे समझ आते देर नहीं लगी कि इन 'कमीनों' की असली मंशा क्या थी। ये बाहर खड़े होकर भीड़ की दुहाई नहीं दे रहे थे, बल्कि बाहर से गुजरने वाली लड़कियों को 'ताड़ने' का सुनहरा मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे।

जैसे ही मैं मुड़कर बाहर आया, मयूर और बाकी सब मुझे देखते ही जोर-जोर से ठहाके मारकर हँसने लगे। मेरी आंखों में गुस्सा देख मयूर बोला, "अरे गुस्सा मत कर भाई, तू भी यहीं रुक जा... आज आराम से नज़ारे लेते हुए खाना खाते हैं।"

मैंने भी हार मानते हुए सर हिलाया और हँसते हुए कहा, "ठीक है भाई, ताड़ो तुम सब लड़कियां! इसी में तुम्हारी इंजीनियरिंग की डिग्री सफल होगी।"

अभी हमारी पंचायत चल ही रही थी कि अंदर से दिनेश भाई की बुलंद आवाज गूँजी— "ए दिनेश भाई के लाडलों! जल्दी आ जाओ खाना खाने, वरना खत्म हो जाएगा तो बर्तन चाटते रह जाओगे!"

दिनेश भाई और कुन्हल भाई ही उस कैंटीन की जान थे। उनसे हमारी यारी ऐसी थी कि कभी-कभी एक्स्ट्रा सब्जी या ज्यादा मक्खन बिना मांगे ही मिल जाता था। उनकी डांट में भी बड़ा अपनापन था। हम सबने फटाफट अपनी थालियाँ उठाईं और किसी भूखे शेर की तरह खाने पर टूट पड़े।

कैंटीन में पेट पूजा खत्म हुई ही थी कि शाम की 'लैब' वाली ज़िम्मेदारी सामने आ खड़ी हुई। कांजी और बाकी यार-दोस्तों ने वहीं से हाथ हिलाकर टाटा-बाय-बाय कर दिया— "चल भाई, शाम को मिलते हैं बाहर चाय-नाश्ते की महफिल में!"

मैं भारी मन से पर पक्के इरादे के साथ लैब की ओर बढ़ गया। सच कहूँ तो किताबों और लंबे लेक्चर से मेरी पुरानी दुश्मनी थी, पर प्रैक्टिकल? भाई, उसमें तो अपना हाथ एकदम साफ़ था। थ्योरी में भले ही मैं डब्बा गोल रहता, पर प्रैक्टिकल में मैं सीधा '100 नंबर' वाला खिलाड़ी था।

जैसे ही लैब का दरवाजा धकेला, वहां का सन्नाटा देखकर मेरा माथा ठनका। पूरी लैब खाली-खाली सी थी, बस कुछ गिने-चुने 'पढ़ाकू' चेहरे ही नज़र आ रहे थे।

एक पल के लिए तो दिल से आवाज़ आई— "अबे, क्यों आया? तू भी मजे करता बाहर!" पर फिर याद आया, अगर मैं नहीं आता तो मेरे इन 'परम मित्रों'— रौनक, जिशांत और योगेश की प्रॉक्सी कौन लगाता? बेचारे मेरे भरोसे ही तो चैन की नींद सो रहे होंगे।

वहीं कोने में वह 'क्लास टॉपर' भी बैठी थी। हमेशा की तरह उसने मुझे ऐसे घूरकर देखा जैसे मैं कोई दूसरे ग्रह का प्राणी हूँ। उसकी नज़रों से साफ़ झलक रहा था कि वह सोच रही है— "लो, आ गया पेटू महाराज! अकेले-अकेले कैंटीन में माल दबाकर आ रहा है, कम से कम झूठे मुंह पूछ ही लेता।" खैर, मैंने भी उसकी नज़रों को इग्नोर किया और अपनी जगह संभाली।

कुछ ही देर में लैब का माहौल गरम हुआ और काम शुरू हो गया। सब ग्रुप बनाकर अपने-अपने इंस्ट्रूमेंट्स से कुश्ती करने लगे। मैं और कांजी भी अपनी-अपनी जर्नल खोलकर, कैलकुलेशन के जाल में उलझते हुए, पूरी शिद्दत से प्रैक्टिकल को अंजाम देने में जुट गए। आखिर नंबरों का सवाल था और प्रैक्टिकल में अपनी बादशाहत कायम रखनी थी!

टॉपर की टेबल और बैकबेंचर का 'केमिकल लोचा

केमिकल इंजीनियरिंग की लैब में हमेशा की तरह तेज़ाब और रसायनों की गंध फैली थी। मैं और कांजी (मेरा बेंच पार्टनर और एक्स्ट्रा टीचर) अपनी रीडिंग लेने की कोशिश कर रहे थे, पर मेरा ध्यान बार-बार लैब के उस कोने में जा रहा था जहाँ धृसा खड़ी थी।

वही 'बॉयज़ कट' हेयर स्टाइल, चेहरे पर एक गंभीर चमक और हाथ में हमेशा की तरह लैब मैनुअल। वह जितनी अमीर थी, उतनी ही पढ़ाई में सख्त भी।

कांजी: (धीमे से मेरे कान में) "अबे सागर! बीकर देख, रीडिंग ऊपर जा रही है। तू धृसा को देख रहा है या प्रैक्टिकल कर रहा है? वो टॉपर है भाई, कार से आती है... और तू? तू अन्ना के गल्ले से उधार की चाय पीता है!"

मैं सकपका गया। तभी अचानक धृसा हमारी टेबल की ओर आई। मेरा दिल ऐसे धड़कने लगा जैसे वाइवा (Viva) में कोई मुश्किल सवाल पूछ लिया गया हो।

धृसा: (सपाट आवाज़ में, बिना मुस्कुराए) "सागर, तुम्हारे टाइट्रेशन की रीडिंग क्या आई है? मेरी रीडिंग में थोड़ा वेरिएशन आ रहा है, क्या मैं तुम्हारा ऑब्जर्वेशन चेक कर सकती हूँ?"

मैं सन्न! क्लास की टॉपर मुझसे... जो मुश्किल से पास होने की जुगाड़ में रहता था, उससे मदद माँग रही थी?

मैं: (हकलाते हुए) "अह... हाँ, ज़रूर। पर मेरी रीडिंग तो... कांजी ने निकाली है। मतलब, हम दोनों साथ ही कर रहे हैं।"

धृसा ने मेरी जर्नल (Journal) उठाई और बड़े ध्यान से देखने लगी। उसकी आँखों में एक अजीब सी सचाई थी। वह अमीर ज़रूर थी, पर घमंडी नहीं लगती थी।

धृसा: "तुम्हारी हैंडराइटिंग अच्छी है सागर। और डायग्राम्स भी। पर ये कैलकुलेशन... यहाँ तुमने गलती की है। अगर एग्जाम में ऐसा करोगे तो फेल हो जाओगे।"

उसने पेन उठाया और मेरी जर्नल में ही काट-कूट कर सही फॉर्मूला लिख दिया। कांजी बगल में खड़ा अपनी हँसी दबा रहा था।

धृसा: "वैसे, कल तुम क्लास में बहुत खोए-खोए थे। लेक्चरर साहेब तीन बार तुम्हारा नाम पुकार चुके थे। सब ठीक तो है ना?

मैं: "नहीं... वो बस... नींद पूरी नहीं हुई थी।"

धृसा हल्की सी मुस्कुराई—शायद पहली बार।

धृसा: "थोड़ा सो लिया कर पागल, वरना तेरा दिमाग नहीं चलेगा। दिमाग नहीं चलेगा तो मैं तुम्हें कैसे याद रखूंगी?, दिमाग में होना चाहिए सागर। ये लो तुम्हारी जर्नल। अगली बार रीडिंग खुद लेना, कांजी के भरोसे मत रहना।"

ओरे वो इतना कह कर चली गई

कांजी: "देख लिया? वो टॉपर है बेटा! तुझे फॉर्मूला समझा के चली गई और तू अभी भी 'नींद' ही ढूँढ रहा है!"

“तीर्थराज" का स्वाद और यारों की टोली

घड़ी की सुइयों ने जैसे ही शाम के 5 बजाए, कॉलेज की इमारत से छात्रों ऐसे निकला जैसे किसी बांध से पानी छूटता है। लेक्चर की थकान चेहरे पर थी, पर दिल में बाहर की आज़ादी का उत्साह। मैं और कांजी, जो मेरा लंगोटिया यार था, कंधे पर बैग लटकाए गेट की तरफ बढ़ रहे थे। हमारी योजना साफ थी—सीधे नाश्ते की दुकान और फिर चाय।

अभी हम गेट से बाहर निकले ही थे कि सामने से योगेश आता दिखा। योगेश, जिसकी फितरत ही दूसरों की टांग खींचना है। जैसे ही उसकी नज़र हम पर पड़ी, उसके चेहरे पर एक कुटिल मुस्कान उभरी।

"अरे भाई! ओ भाई!" योगेश ने चिल्लाकर हमें रोका।

कांजी रुक गया, "क्या हुआ बे?"

योगेश ने कांजी की तरफ देखते हुए और मुझे नजरअंदाज करते हुए बड़े मासूम लहजे में पूछा, "कांजी, ये दादाजी के साथ किधर जा रहे हो?"

इतना सुनना था कि मेरा खून खौल उठा। मैंने न आव देखा न ताव, झपटकर योगेश को एक हाथ से गर्दन से पकड़ा और दूसरे हाथ से कांजी को। दोनों को अपनी बगल में ऐसे दबाया जैसे पहलवान रिंग में अपने प्रतिद्वंद्वी को दबोचता है।

"साले! किसे दादाजी बोल रहा है?" मैंने उसे और जोर से भींचा।

लेकिन वो दोनों कहाँ मानने वाले थे। "अरे छोड़ो दद्दाजी... अरे दादाजी, कमर टूट जाएगी," दोनों एक सुर में बोलकर मुझे और चिढ़ाने लगे।

तभी योगेश ने नाटक करते हुए अपना कान खुजलाया और बोला, "अरे यार, मैं कब से आवाज दे रहा था, तुम सुन ही नहीं रहे थे। तभी तो मैंने जोर से चिल्लाया—दादाजी! दादाजी! अब उम्र के हिसाब से कान भी जवाब देने लगे हैं क्या तेरे?"

कांजी ने आग में घी डालते हुए कहा, "सही कह रहा है योगेश। लगता है सुनाई देना बंद हो गया है बुढ़ापे में।"

मैंने कांजी की गर्दन और जोर से दबा दी। उसकी 'चूँ' की आवाज निकली, पर हँसी नहीं रुकी। उनकी इस हंसी में कॉलेज के दिनों की वो बेफिक्री थी जो दुनिया की किसी और चीज़ में नहीं मिलती।

"अच्छा बाबा ठीक है, अब कहाँ ले जा रहे हो दादाजी?" योगेश ने हार मानते हुए पूछा।

मैंने अपनी पकड़ ढीली की और शान से बोला, "नाश्ता करने और चाय पीने। चलना है तो चल, वरना यहीं दफन कर दूँगा।"

योगेश मुस्कुराया, "मुफ्त का नाश्ता और चाय? मना किसने किया है!"

तीर्थराज" का अड्डा और टमाटर चटनी का युद्ध

हम तीनों बातें करते हुए नाश्ते की उस मशहूर दुकान की ओर बढ़े, जहाँ अक्सर हमारी महफिल जमती थी। दूर से ही हमें विक्रम, भरत और निर्मित खड़े दिखाई दिए। वो तीनों पहले से ही वहाँ मोर्चा संभाले हुए थे।

मैंने जेब से फोन निकाला और मयूर को कॉल लगाया। "मयूर, कहाँ मर गया? बाहर आ, हम सब नाश्ते पर हैं।"

मयूर की आवाज़ फोन के उस पार से कुछ थकी हुई आई, "भाई, मैं तो हॉस्टल आ गया यार। बहुत थक गया था।"

"अरे, तो हॉस्टल में क्या करेगा? आ जा इधर," मैंने दबाव डाला।

मयूर ने सौदा किया, "नहीं यार, अब वापस नहीं आऊंगा। तुम लोग जब वापस आओ, तो मेरे लिए नाश्ता लेते आना।"

"चलो ठीक है, नवाब साहब," मैंने कॉल काटा।

अब हम सब पहुँच चुके थे 'राजू की वडा पाऊ और दाबेली' की दुकान पर, जिसका नाम बड़े अक्षरों में लिखा था— "तीर्थराज"। यहाँ की दाबेली और वडा पाऊ के चर्चे पूरे इलाके में थे। तीखी चटनी, मीठा मसाला और ऊपर से ढेर सारा सेव... नाम सुनते ही मुँह में पानी आ जाए।

"ओ राजू भाई! सात वडा पाऊ और सात दाबेली लगाओ, एकदम कड़क!" मैंने आर्डर दिया।

जैसे ही प्लेटें आईं, सब टूट पड़े। लेकिन असली तमाशा तो अब शुरू होना था। भरत और निर्मित, जो अक्सर एक-दूसरे के जानी दुश्मन बन जाते थे, आज टमाटर चटनी (कैच-अप) के लिए भिड़ गए।

निर्मित ने अपनी प्लेट में इतनी चटनी ले ली थी कि मानो वो उसमें दाबेली नहीं खा रहा था, बल्कि दाबेली को चटनी के तालाब में तैरा रहा था।

भरत ने उसे देखते हुए कहा, "बे निर्मित, इतनी चटनी तो पूरी दुकान में नहीं होगी जितनी तूने अकेले ली है। क्या इसी में नहाने का इरादा है?"

"तुझे क्या? मेरा पैसा, मेरी चटनी!" निर्मित ने मुँह बनाकर जवाब दिया।

मैंने हँसते हुए कहा, "भाई, इतनी चटनी तो चार-पाँच लोग और खा लेते। मुझे तो लग रहा है ये चटनी का नशा करके आया है।"

अभी बातें चल ही रही थी कि पानी के पाउच की लड़ाई शुरू हो गई। यहाँ का नियम था—पानी पीना कम, एक-दूसरे पर फेंकना ज्यादा। सबने एक-दूसरे को पानी के पाउच दे-देकर मारना शुरू किया।

निर्मित अभी शांति से अपनी दाबेली का आखिरी निवाला ले ही रहा था कि भरत ने एक पाउच पूरी ताकत से उसकी ओर फेंका। निर्मित ने गजब की फुर्ती दिखाई, हवा में ही पाउच को लपकने के चक्कर में उसने अपनी प्लेट छोड़ दी। दाबेली ज़मीन पर और पाउच हाथ में!

उस वक्त निर्मित का जो चेहरा बना, उसे देखकर हम सब अपनी हंसी नहीं रोक पाए। बेचारा ऐसा लग रहा था जैसे किसी ने उससे उसकी जायदाद छीन ली हो।

अन्ना का गल्ला और वो जादुई चाय

नाश्ता खत्म करके हम आगे बढ़े जहाँ सुरेश (जिसे हम प्यार से अन्ना कहते थे) का गल्ला था। सुरेश के गल्ले पर जाकर हमने थोड़ी और मस्ती की, कुछ हंसी-मजाक की बातें हुईं और फिर हम मुड़े पास की चाय की टपरी की ओर।

कॉलेज की शाम बिना चाय के अधूरी है। टपरी वाले ने एक-एक करके सबको कांच के गिलासों में गर्मागर्म चाय पकड़ाई। भाप उड़ती हुई वो कड़क चाय और यारों की बेमतलब की बातें—यही तो असली सुकून था।

सबने फटाफट चाय खत्म की। तभी तीर्थराज वाले ने इशारा किया, "भाई, पार्सल तैयार है!"

मयूर की दाबेली और वडा पाऊ का पैकेट मैंने हाथ में लिया। अब हम सब वापस हॉस्टल की ओर मुड़े। रास्ते में हमारी मस्ती कम नहीं हुई थी। तभी सामने से रावल काका आते दिखे।

रावल काका हॉस्टल के पास के ही एक बुजुर्ग थे, जो थोड़े सख्त थे पर लड़कों के साथ उनकी नोक-झोंक मशहूर थी। भरत और निर्मित ने उन्हें देखते ही मोर्चा संभाल लिया।

"काका! आज तो बड़े जवान लग रहे हो, कहाँ की तैयारी है?" भरत ने चुटकी ली।

काका ने अपनी लाठी घुमाई और बोले, "तुम छोकरे सुधरोगे नहीं! पढ़ाई-लिखाई करो, वरना हॉस्टल से बाहर फिंकवा दूँगा।"

हँसते-हँसते हम हॉस्टल के गेट तक पहुँच गए। सब अपने-अपने कमरों की ओर बढ़ने लगे।

कमरा नंबर 2225 और सुखविंदर पाजी का जादू

सब सीढ़ियों की तरफ बढ़ रहे थे कि तभी मैंने ज़ोर से चिल्लाकर सबको रोका, "ओए सुनो! अभी अपने-अपने कमरों में जा रहे हो, पर ठीक एक घंटे बाद सब तैयार रहना। पीछे वाली गली में चाय पीने जाना है। कोई भी सोएगा नहीं!"

सबने 'हाँ-हाँ' में सिर हिलाया और अपने कमरों में चले गए। मैं भी अपनी मंज़िल की ओर बढ़ा। मेरा कमरा पहली मंज़िल पर था— कमरा नंबर 2225।

अंदर जाते ही मैंने अपना बैग पटका और खिड़की खोली। ठंडी हवा के झोंके ने मन को थोड़ा शांत किया। मैंने जल्दी से कपड़े बदले और बिस्तर पर लेट गया। सोचा था थोड़ी देर सो जाऊँगा, पर नींद आँखों से कोसों दूर थी। दिमाग में घर वालों की यादें और दिन भर की मस्ती घूम रही थी।

मैंने अपना हेडफोन उठाया। बिना संगीत के मुझे नींद आना नामुमकिन था। और अगर प्लेलिस्ट में सुखविंदर सिंह (सुखी पाजी) के गाने हों, तो फिर बात ही क्या है!

जैसे ही मैंने उनका गाना 'छैंया छैंया' और फिर 'चक दे इंडिया' प्ले किया, उनकी वो बुलंद आवाज़ सीधे रूह में उतर गई। क्या आवाज़ है उनकी! इतनी ऊर्जा, इतना जोश। मैंने शायद उनके हर गाने को हज़ारों बार सुना होगा, पर हर बार वो नए से लगते थे।

हेडफोन कानों पर लगा था, आँखें बंद थीं। सुखी पाजी के सुरों के साथ-साथ मैं धीरे-धीरे खयालों की दुनिया में खोने लगा। घर की याद आई, माँ के हाथ की रोटी और पिता जी की वो हल्की सी डांट...।

सोचा था सो जाऊँगा, पर ये यादें और ये संगीत सोने कहाँ देने वाले थे?

माँ की यादें और धुंधले होते सपने

कमरा नंबर 2225 की उस चारदीवारी में, जहाँ दीवारें पोस्टरों से नहीं बल्कि हमारे सपनों की खरोंचों से भरी थीं, मैं बिस्तर पर लेटा हुआ था। हेडफोन से सुखविंदर पाजी की आवाज़ छनकर आ रही थी, पर मेरा ध्यान संगीत से हटकर कहीं दूर चला गया था। जैसे ही मैंने आँखें मूंदकर अपनी माँ का चेहरा याद किया, नींद कोसों दूर भाग गई।

अक्सर लोग कहते हैं कि थकान में नींद अच्छी आती है, पर जो लड़के घर से दूर रहकर कुछ बनने का सपना आँखों में पालते हैं, उनकी आँखों में नींद नहीं,

जिम्मेदारियों का बोझ होता है। माँ का वो चेहरा... जब मैं घर से कॉलेज के लिए निकल रहा था, उनकी आँखों में जो चमक थी, वो सिर्फ़ प्यार नहीं था, वो एक उम्मीद थी। "बेटा, अपना ख्याल रखना और बड़ा आदमी बनना," उनके ये शब्द मेरे कानों में सुखविंदर के ऊंचे सुरों से भी तेज़ गूंज रहे थे।

मैंने छत की ओर देखते हुए सोचा, 'कमबख्त, अभी तो घरवालों के लिए बहुत कुछ करना बाकी है।' एक बड़ा घर, माँ के चेहरे पर वो सुकून वाली मुस्कान, और पिता जी के हाथों की वो मेहनत वाली लकीरों को आराम देना—यही तो मेरा असली लक्ष्य था। मैंने मन ही मन खुद से वादा किया, "चाहे कितनी भी ठोकरें लगें, मैं मेहनत करूँगा। हारना तो मैंने सीखा ही नहीं। उनको एक ऐसा भविष्य दूँगा कि सारी दुनिया देखेगी।"

इन्हीं जज्बाती खयालों और भविष्य के ताने-बाने में मैं ऐसा उलझा कि वक्त का पता ही नहीं चला।

'एक्टिंग' और डब्ल्यूडब्ल्यूई (WWE) का अखाड़ा

तभी गलियारे से कुछ जानी-पहचानी आवाज़ें आने लगीं। हंसी-मजाक, जूतों की धमक और वो खास तरह का शोर जो सिर्फ मेरे यार ही मचा सकते थे।

'अरे, ये तो भरत की आवाज़ है!' मैंने झट से अपने हाथ की घड़ी देखी। शाम के साढ़े छह बज रहे थे। घरवालों की सोच में डूबा मैं एक पल के लिए भी सो नहीं पाया था। अब अगर ये लोग अंदर आए और मुझे जगा हुआ देखा, तो मेरी इमोशनल बातों का मज़ाक उड़ाते-उड़ाते मेरा दम निकाल देंगे।

मैंने तुरंत फैसला किया—सोने की एक्टिंग (Acting) ही एकमात्र रास्ता है। मैंने फुर्ती से कंबल खींचा और अपने चेहरे तक ढँक लिया। सांसें ऐसे लेने लगा जैसे गहरी नींद के सातवें आसमान पर हूँ।

दरवाज़ा धड़ाम से खुला। निर्मित और भरत कमरे में ऐसे दाखिल हुए जैसे किसी फिल्म में विलेन की एंट्री होती है। आते ही दोनों ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे।

"देख तो इसे, कैसा कुंभकरण की तरह पड़ा है," भरत की आवाज़ आई।

मुझे लगा शायद ये लोग चले जाएंगे, पर ये दोस्त थे, फरिश्ते नहीं! अचानक हवा में कुछ लहराया और सीधे मेरी कमर पर आकर 'धप्प' से लगा। भरत ने पास के बेड पर पड़ी एक मोटी इंजीनियरिंग की किताब (शायद मैकेनिक्स की होगी) मुझे फेंक कर मारी थी।

"आह!" मेरी चीख अंदर ही दब गई, पर मैं हिला नहीं।

तभी निर्मित को जाने क्या सूझी। वो पीछे हटा और हवा में छलांग लगाते हुए सीधे मुझ पर कूद पड़ा। भाई साहब! मेरा बेड उस वक्त किसी हॉस्टल का बेड नहीं, बल्कि WWE की 'रेसलिंग रिंग' बन गया था।

"उठ ओए दादाजी! चाय का टाइम हो गया!" निर्मित चिल्लाया।

अब मेरा सब्र जवाब दे गया। मैंने कंबल फेंका और निर्मित को धक्का दिया। पर तभी भरत भी बीच में कूद गया। अब हम तीन थे और एक छोटा सा बेड। कभी मेरा पैर भरत के मुंह पर, तो कभी निर्मित की कुहनी मेरी पसलियों में। हम तीनों मस्ती में ऐसे लड़ रहे थे जैसे सालों की दुश्मनी निकाल रहे हों।

कमरे के बाहर मयूर और कांजी खड़े होकर इस मुफ्त के मनोरंजन का लुत्फ उठा रहे थे। कांजी हंसते हुए बोला, "मारो-मारो, दादाजी की हड्डियाँ आज चटकनी चाहिए!"

कमीनों ने मुझे बहुत धोया! जब हम शांत हुए, तो कमरे की हालत 'तितर-बितर' हो चुकी थी। बेडशीट ज़मीन पर थी, तकिया कोने में पड़ा था और मेरी किताबें आज़ाद परिंदों की तरह पूरे कमरे में बिखरी थीं।

गणित का नया फॉर्मूला—2 का 20

सांसें फूल रही थीं और चेहरा हँसते-हँसते लाल हो चुका था। मैंने बिस्तर ठीक करते हुए हाँफते हुए कहा, "सालो! चैन से रहने भी नहीं देते। बस 5 मिनट दो मुझे। 2 मिनट में गया और 20 मिनट में आया।"

इतना सुनते ही निर्मित का सिर चकरा गया। उसने अपनी टेढ़ी शक्ल बनाई और कन्फ्यूज होकर बोला, "ये कैसा हिसाब है बे? 2 मिनट में जाकर 20 मिनट में कैसे आएगा? गणित फेल कर दिया तूने तो!"

निर्मित की वो मासूमियत भरी और कन्फ्यूज शक्ल देखने लायक थी। हम सब फिर से ठहाका मारकर हँसे।

जैसे ही मैं वॉशरूम की तरफ बढ़ने लगा, कांजी पीछे से चहका, "अरे छोड़ न निर्मित, दादाजी अब अपनी उम्र के हिसाब से ही टाइम लगाएंगे न!"

भरत ने दरवाज़े से बाहर निकलते हुए चेतावनी दी, "जल्दी आना! हम लोग नीचे हॉस्टल के गेट पर तेरा वेट कर रहे हैं। अगर लेट हुआ तो फिर से धोएंगे!" और वो मज़ाक में मारने के लिए मेरी ओर झपटा। मैं भी फुर्ती से वॉशरूम में घुस गया और कुंडी चढ़ा ली।

सच्ची दोस्ती और वो खतरनाक 'गला'

अन्दर वॉशरूम में ठंडे पानी से मुँह धोते हुए मैंने शीशे में खुद को देखा। बाहर दोस्तों के चिल्लाने और हंसने की आवाज़ें अभी भी आ रही थीं। अचानक मेरा मन भर आया। मन ही मन सोचा—शायद पिछले जन्म में कुछ तो अच्छे कर्म किए होंगे, जो इतने सच्चे और हीरा जैसे दोस्त मिले। ये वो लोग थे जिनके सामने मुझे अपनी परेशानियों का मुखौटा पहनने की ज़रूरत नहीं थी।

तैयार होकर जब मैं नीचे पहुँचा, तो देखा सब सीढ़ियों पर बैठकर मेरा ही इंतज़ार कर रहे थे। मुझे आता देख मयूर बोला, "लो भाई, नवाब साहब तशरीफ़ ले आए।"

मेरा जी कर रहा था कि सबको गले लगा लूँ, पर यहाँ 'गले लगना' खतरनाक था। खासकर भरत और निर्मित के साथ, यहाँ 'गले लगने' से ज्यादा अपना 'गला बचाना' ज़रूरी था। हमारे बीच एक मजाक मशहूर था, "भरत और निर्मित के हाथ से अपना गला बचाना उतना ही मुश्किल है, जितना कुत्ते के मुँह से हड्डी छीनना या मोगली के हाथ से उसकी चड्डी लेना या फिर किसी गुजराती के हाथ से डांडिया छीनना!"

बात फिल्मी थी, पर हमारे ग्रुप की हकीकत यही थी।

अगर हम तीनों (मैं, भरत और निर्मित) के बीच में कोई तीसरा बंदा गलती से बातों-बातों में आ गया, तो उसकी खैर नहीं। एक तरफ से मेरा हाथ और दूसरी तरफ से भरत या निर्मित का हाथ सीधे उसके गले पर होता था। फिर तो उसे वो भगवान भी दिखाई देने लगते थे जिन्हें उसने कभी याद नहीं किया होगा।

हमारी ये चौकड़ी—मयूर, भरत, निर्मित और आपका भाई (मैं)—पूरे कॉलेज में मशहूर थी। हम सिर्फ दोस्त नहीं थे, हम एक चलता-फिरता तूफान थे। जहाँ से गुजरते, वहाँ रौनक और शोर अपने आप आ जाता।

मैंने मुस्कुराते हुए सबकी ओर देखा और बोला, "चलो भाई, अब चाय पिलाओ वरना दादाजी अपनी वसीयत से तुम सबका नाम काट देंगे!"

और इसी हंसी-ठिठोली के साथ हमारी टोली हॉस्टल के गेट से बाहर उस पीछे वाली गली की ओर चल पड़ी, जहाँ चाय की टपरी पर हमारा एक और हसीन लम्हा इंतज़ार कर रहा था।

बड़ा भाई और अनकही जिम्मेदारियाँ

हॉस्टल में मेरी हैसियत सिर्फ एक छात्र की नहीं थी। उम्र में सबसे बड़ा होने के नाते, लड़कों के बीच मेरी एक अलग ही साख थी। सब 'दादाजी' कहकर चिढ़ाते जरूर थे, पर जब दिल पर कोई बात आती, तो सबकी सुई मुझ पर ही आकर रुकती थी। कोई-कोई तो बातों-ही-बातों में अपनी पूरी रामकहानी सुना देता था—घर की किल्लत, ब्रेकअप का दर्द, या फिर करियर को लेकर वो अनजाना डर।

मानो मैं उनका अपना सगा बड़ा भाई हूँ। मुझे भी अच्छा लगता था। जब भी उन्हें लगता कि वो टूट रहे हैं, मैं उनके लिए खड़ा रहता। मैंने हमेशा कोशिश की कि सबकी अच्छी बातों को बढ़ावा दूँ। फैमिली प्रॉब्लम हो या खुद की उलझन, एक ठंडे दिमाग से दी गई मेरी सलाह उनके चेहरे पर मुस्कान ले आती थी। शायद दूसरों के जख्म भरते-भरते मैं अपने जख्मों को भूलना सीख गया था।

पर आज, शाम की उस चाय की महक हमें बुला रही थी।

'जय अम्बे' का किला और दीवार फाँदने की जंग

हम सब निकल पड़े हॉस्टल के पीछे वाली उस जादुई जगह की ओर—"जय अम्बे टी स्टॉल"। लेकिन वहाँ पहुँचना इतना आसान नहीं था। हमारे सामने दो बड़ी चुनौतियाँ थीं: पहली, हॉस्टल के पीछे वाली ऊंची दीवार को फाँदना, और दूसरी, खुद को बिना चोट पहुँचाए उस पार उतरना।

दीवार के पास पहुँचते ही सब ठिठक गए। एक-दूसरे का चेहरा देखने लगे जैसे पूछ रहे हों—"शुरुआत कौन करेगा?"

बेचारा कांजी! उसे शायद इस हॉस्टल के अघोषित नियमों का पता नहीं था। उसे नहीं मालूम था कि जो इस दीवार पर पहले चढ़ता है, उसे या तो नीचे खींच लिया जाता है या फिर किसी कट्टे की तरह दूसरी ओर फेंक दिया जाता है। जैसे ही कांजी ने जोश में आकर दीवार पर हाथ टिकाए और ऊपर चढ़ा, निर्मित ने बिजली की फुर्ती से उसकी टांग पकड़ी और उसे नीचे खींच लिया।

"अरे भाई! क्या कर रहा है?" कांजी चिल्लाया।

निर्मित और भरत उस दीवार के अघोषित द्वारपाल बने खड़े थे। वो किसी को चढ़ने ही नहीं दे रहे थे। पर खेल का नियम सीधा था—जो पहले उस पार गया, वो उस वक्त का 'राजा' कहलाएगा।

भरत को लगा कि निर्मित कांजी के साथ व्यस्त है, यही सही मौका है। वो पूरी ताकत से दीवार की तरफ भागा। पर वो भूल गया था कि 'दादाजी' अभी गेम में हैं। जैसे ही उसने छलांग लगाई, मैंने उसे पीछे से दबोचा और धड़ाम से नीचे खींच लिया। धूल उड़ी, गालियां निकलीं और फिर ठहाकों का दौर शुरू हुआ।

तभी हमने देखा, चतुर मयूर दीवार के चक्कर में पड़ा ही नहीं। वो पास की गंदी नाली के संकरे रास्ते से घूमकर दूसरी तरफ पहुँच गया था।

काफी देर हो गई थी। कांजी और मयूर उस पार खड़े होकर हमारे संघर्ष का वीडियो बना रहे थे और मजे ले रहे थे। मुझे लगा अब देर हो रही है। मैंने भरत को आँख मारी और इशारा किया। मैंने निर्मित को बातों में उलझाया, "देख निर्मित, उधर वार्डन आ रहा है क्या?"

जैसे ही निर्मित मुड़ा, मैंने एक झटके में दीवार फाँदी और दूसरी तरफ कूद गया। पीछे से भरत और निर्मित फिर से आपस में भिड़ गए। निर्मित बेचारा हैरान था, उसे लगा उसके साथ धोखा हुआ है।

मैंने उस पार से चिल्लाकर कहा, "ओए! राजू भाई के गल्ले से किसे क्या लेना है? जल्दी आओ वरना मैं अकेले ही सब सफाचट कर जाऊँगा!"

'राजू भाई' और 'खाने' का नाम सुनते ही निर्मित का गुस्सा गायब हो गया। वो पूरी दीवार घूमकर भागता हुआ आया। भरत भी पीछे-पीछे आ गया—आखिर अकेला रहकर वो करता भी क्या?

राजू काका की उधारी और 'अन्ना' का स्वैग

चलते-चलते उन दोनों (भरत और निर्मित) की एक बहुत बुरी आदत सामने आई। वो किसी भी मामूली मुद्दे पर सड़क के बीचों-बीच रुककर बहस करने लगते। मयूर और मैं सर पकड़ लेते, क्योंकि उनकी वजह से हमें अक्सर देरी हो जाती थी।

आखिरकार हम राजू काका के गल्ले पर पहुँचे। काका हमारे लिए दुकानदार नहीं, बल्कि एक यार की तरह थे। हमारी उधारी का खाता इतना लंबा था कि अगर कोई और दुकानदार होता तो हमें देखते ही शटर गिरा देता। पर काका... वो तो फरिश्ते थे। उनके मुँह से कभी पैसों की बात नहीं निकली। हमारा रिश्ता ऐसा था कि जब जेब में पैसे हुए तो दे दिए, वरना—"काका, फिर कभी!"

मयूर के अलावा हम सबने एक-एक वेफर और बिस्कुट का पैकेट उठाया। फिर हम पहुँचे अपनी असली मंज़िल—'जय अम्बे टी स्टॉल'।

वहाँ पहुँचते ही दूर से एक आवाज़ आई, "भाईजान! कित्थे?"

वो और कोई नहीं, मेरा जिगरी दोस्त निशांत और श्लोक थे। नज़र घुमाई तो देखा पूरी 'साउथ गैंग' वहाँ जमा थी। अजय, शैशव, वीरल, प्रतीक, प्रीतेश, विशाल, मयंक, मोंटू... और भी न जाने कितने सिर वहाँ दिख रहे थे। सबके बीच जाकर मैं ऐसे बैठा जैसे किसी कबीले का सरदार अपनी परिषद में बैठता है।

वो बदबूदार लड़का और 'शेर' का गुस्सा

निर्मित और भरत ने चाय का ऑर्डर दिया। थोड़ी देर में राजू का एक हेल्पर लड़का चाय लेकर आया। चाय देकर वो मेरे ठीक बगल में आकर बैठ गया।

बैठते ही मेरे नथुनों में एक ऐसी तीखी और सड़ी हुई बदबू आई कि मेरा दिमाग घूम गया। ऐसा लग रहा था जैसे वो लड़का पिछले दो जन्मों से नहीं नहाया हो। मुझे चिढ़ होने लगी। मन में आया—यार, मैं सबसे ज़्यादा बात करता हूँ, इसका मतलब ये तो नहीं कि कोई भी आकर मेरे सर पर बैठ जाए? 'शेर' के पास बैठने की हिम्मत हर किसी की नहीं होनी चाहिए!

मैंने उसकी तरफ एक ऐसा खूंखार और गुस्से वाला लुक दिया कि वो लड़का बिना एक शब्द बोले, अपनी चाय का खाली गिलास उठाकर तुरंत वहाँ से रफू-चक्कर हो गया।

तभी महफिल में हंसी का फव्वारा फूटा। मयूर वेफर्स का पैकेट दबाए बैठा था, दे ही नहीं रहा था। तभी निर्मित ने अपनी जेब से एक क्रीम वाला बिस्कुट निकाला।

"ये कहाँ से आया बे?" मैंने पूछा।

"काका के गल्ले से हाथ साफ कर लिया था," निर्मित ने अपनी कुटिल मुस्कान के साथ कहा।

उसकी इस छोटी सी चोरी और उस पर उसके गर्व को देखकर हम सब लोट-पोट हो गए।

वो जगह... वो चाय की टपरी... मुझे लगा कि अगर मुझे पूरी जिंदगी भी इन पागलों के साथ यहाँ बैठने को कहा जाए, तो मैं खुशी-खुशी बैठ जाऊँगा। पूरे दिन की थकान यहाँ की हंसी में धुल जाती थी।

बड़े भाई का कॉल और वो ठंडा अहसास

तभी जेब में फोन थराया। स्क्रीन पर नाम देखते ही मेरे चेहरे की हंसी गायब हो गई। "बड़े भाई का कॉल।"

मैंने चाय साइड में रखी और शोर से दूर सड़क के आगे की ओर चला गया। मेरा भाई... जो मुझसे प्यार तो बहुत करता है, पर उसका ज़ाहिर करने का तरीका सिर्फ डाँट-फटकार है। वो हमेशा मेरे भविष्य को लेकर फिक्रमंद रहता है और उसकी वो फिक्र अक्सर कड़वे शब्दों में बाहर आती है। आज भी वही हुआ। चलते-चलते उन्होंने मुझे करियर, जिम्मेदारियों और लाइफ के बारे में इतना सुनाया कि मेरा मन भारी हो गया। आज भी वो मुझे ऐसे डाँटते हैं जैसे मैं वही छोटा बच्चा हूँ जो स्कूल जाने से डरता था।

बात खत्म करके जब मैं वापस अपनी मंडली में पहुँचा, तो सबकी नज़रें मुझ पर थीं।

"तेरे बड़े भाई का कॉल था न?" निशांत ने पूछा।

मैं चौंक गया, "तुम सबको कैसे पता चला?"

"भाई, तेरे माथे की लकीरें और ये हाथों का पसीना सब बता रहा है। सिर्फ बड़े भाई ही तुझे इस कदर हिला सकते हैं," कांजी ने हंसते हुए कहा।

मेरा मूड पूरी तरह से उखड़ चुका था। मेज पर रखी मेरी चाय अब पूरी तरह ठंडी हो चुकी थी—बिल्कुल मेरी उम्मीदों की तरह। मैंने फीकी आवाज़ में एक और चाय का ऑर्डर दिया।

दोस्तों ने मेरा चेहरा देखा और समझ गए कि 'दादाजी' को फिर से बूस्ट करने की ज़रूरत है। फिर क्या था, उन्होंने माहौल बदलने के लिए गंदी-अच्छी बातें, कॉलेज की लड़कियों के किस्से और पुरानी यादें छेड़ दीं।

दूसरी चाय आई। हमने गिलासों को टकराया—"चीयर्स!"

ठंडी चाय का गम और बड़े भाई की डाँट, उस गर्मागर्म दूसरी चाय के घूँट के साथ हलक के नीचे उतर गई। थोड़ी देर और मस्ती चली और फिर हम सब वापस हॉस्टल की ओर बढ़ चले।

हॉस्टल की वो यादगार चिकन पार्टी: एक दास्तान

अभी हम बेंच से उठे ही थे कि धूल उड़ाती हुई एक बाइक हमारे सामने आकर रुकी। अजय पीछे बैठा था, उतरते ही उसके चेहरे पर एक अजीब सी चमक थी। उसने बिना किसी भूमिका के सीधे मुद्दे की बात की— "भाई, आज चिकन बनाएँ?"

चिकन! यह शब्द सुनते ही जैसे मेरे कान खड़े हो गए। जहाँ चिकन की बात हो, वहाँ 'ना' कहना तो मेरे शब्दकोश में था ही नहीं। लेकिन, थोड़ा भाव खाते हुए और माहौल को फिल्मी बनाते हुए मैंने अपनी आवाज़ में थोड़ी गंभीरता और इमोशन घोला। मैंने अजय की आँखों में देख कर कहा, "देख भाई, रूम तुम्हारा है, सोचना भी तुम लोगों को ही है। एक बार बाकी सबसे भी तो पूछ लो।"

सच तो यह था कि मुझे खुद याद नहीं था कि आखिरी बार हमने चिकन कब खाया था। शायद हफ़्तों या महीनों पहले। मेरी इस 'इमोशनल लाइन' ने काम कर दिया और मयूर और निर्मित को भी सोचने पर मजबूर कर दिया। उनकी खामोशी में ही 'हाँ' छिपी थी। जोश में आकर मैंने चाय वाले को आवाज़ दी, "भाई! एक और राउंड चाय लाओ!" और तुरंत सामने की राशन दुकान पर जाकर चावल और तेल तौलने का ऑर्डर दे दिया।

तभी, गलियों की उस हलचल के बीच, मेरा ध्यान सामने वाली कॉलोनी की उस बिल्डिंग की तरफ गया। वहाँ मेरा 'वन साइडेड लव एंगल' रहा करता था। अब तो शायद मैं उसे भूल चुका हूँ, या शायद भूलने की कोशिश कर रहा हूँ। वह निरमा कॉलेज में पढ़ती थी और सिविल इंजीनियरिंग की स्टूडेंट थी। हम सबने उसे कई बार आते-जाते देखा था। कभी-कभी जब घर वालों से बात करने का मन होता, तो मैं जानबूझकर उसकी बिल्डिंग के पास चला जाता था, बस एक झलक देखने की उम्मीद में।

मैं अभी उसकी यादों की गलियों में खोया ही था कि तभी भरत और निर्मित की आवाज़ ने मेरा सपना तोड़ दिया— "ओए मजनू! हमारे लिए भी एक-एक बिस्कुट लेते आना!" उन्हें पता था कि अगर आज चिकन बनेगा, तो डिनर लेट होगा और भूख तो अभी से लगने लगी थी।

मैंने मुस्कुराते हुए उनके लिए बिस्कुट लिए और वापस आते हुए अपना फेवरेट गाना गुनगुनाने लगा— "कित्थे चलिए, बेरी दा फुल बनके..." मयूर ने जैसे ही यह सुना, खिलखिला कर हँसा और बोला, "ओह! कित्थे काके? आज तो फुल आशिकी के मूड में है!"

हॉस्टल की इस टोली में एक शख्स ऐसा भी था जो 'डील' से बाहर था— कांजी। उसने साफ कह दिया, "भाई, मैं नहीं खाऊँगा, तुम लोग ही एंजॉय करो।" पर पार्टी तो तय हो चुकी थी। अब बारी थी काम बाँटने की, क्योंकि बिना प्लानिंग के हॉस्टल में कुछ भी नहीं बनता।

अजय ने कहा, "मैं और निर्मित चिकन लेने जा रहे हैं, तुम लोग सब्जी लेकर हॉस्टल पहुँचो।"

मैंने मजे लेते हुए पूछा, "बबुवा, चिकन पहचानना आता है तुम्हें? कहीं कुछ और न उठा लाना!"

कांजी ने जोर से ठहाका लगाया, "अरे भाईजान, दादाजी (मुझे हम अक्सर इसी नाम से चिढ़ाते थे) को बड़ा एक्सपीरियंस है इन चीजों का... कांजी, तू इनके साथ जा।"

मैंने बात काटी, "अरे तो फिर सब्जी कौन लेगा? और बाकी सामान की लिस्ट किसे पता है?"

अंत में मैंने कमान संभाली और काम का बँवारा किया—

1. अजय और निर्मित: मेरे बताए हुए 'स्पेशल कट' वाला चिकन लेने जाएंगे।
2. कांजी और मयूर: सीधे हॉस्टल भागेंगे और पिछले जन्म के (यानी पिछले हफ्ते के) गंदे बर्तन धोएंगे।
3. मैं और भरत: सब्जी, राशन और काका की दुकान से 'कोल्ड ड्रिंक' का इंतजाम करेंगे।

सब अपनी-अपनी ड्यूटी पर निकल गए। मैं और भरत पास ही के सब्जी के ठेले पर पहुँचे। ठेले वाला कहीं गायब था, तो हमने बिना वक्त गवाए गाजरें तोड़नी

शुरू कर दीं और मजे से खाने लगे। तभी 'विजू' आया। विजू वही लड़का था जिसे हम हर रोज चिढ़ाते थे। मैंने उसे सब्जियाँ तौलने को कहा। जब पैसे देने की बारी आई, तो मैंने थोड़े कम पैसे पकड़ाते हुए फिल्मी अंदाज में कहा, "देख भाई, इतने भी बहुत हैं तेरे लिए। अब चुपचाप थोड़ा धनिया और मिर्च फ्री में डाल दे!"

सब्जियाँ लेकर हम आगे बढ़े ही थे कि भरत राशन की दुकान से मिर्च, मसाले और तेल का पैकेट हिलाते हुए आता दिखा। अब मिशन का आखिरी पड़ाव था—राजू काका की दुकान।

जैसे ही हम दुकान के पास पहुँचे, देखा कि हमारे दो और 'नगीने'—निशांत और श्लोक—वहाँ खड़े सिगरेट के धुएँ के छल्ले बना रहे थे। मेरे हाथ में सब्जी की थैलियां देखते ही निशांत की आँखें चमक उठीं, "भाईजान! अकेले-अकेले? क्या इरादा है?"

मैंने हंसकर जवाब दिया, "अकेले कहाँ... आज तो चिकन के साथ महफिल जमेगी!"

उसी वक्त मुझे याद आया कि मेहमान बढ़ गए हैं। मैंने तुरंत निर्मित को फोन लगाया, "सुन भाई, चिकन एक किलो की जगह डेढ़ किलो कर दे और मसाला एक्स्ट्रा लाना।"

निर्मित उधर से हंसा, "और कुछ हुकुम मेरे मालिक?"

मैंने भी मजाक में कह दिया, "हाँ भाई, एक 'देसी' की बोतल, चार गिलास, एक पैकेट सिगरेट और चखना भी ले ही लेना!" यह सुनकर पास खड़ा निशांत लोटपोट हो गया।

निशांत ने अपनी बाइक स्टार्ट की और पूछा, "भाईजान, प्रोग्राम कहाँ सेट करना है?"

मैंने गर्व से कहा, "कमरा नंबर 2327, भरत का रूम।"

वो दोनों मुझे प्यार से 'भाईजान' बुलाते थे। श्लोक बोला, "ठीक है, हम सामान सेट करते हैं, तुम जल्दी आओ।"

अंत में मैंने और भरत ने काका की दुकान से ठंडे की दो बोतलें लीं। चलते-चलते मैंने काका से कहा, "काका, आज हमें आने में देर हो जाएगी, हमारे लिए बढ़िया सा पान बनाकर फ्रिज में रख देना।"

काका ने मुस्कुराते हुए सलाम किया, "हो जाएगा मालिक, बेफिक्र रहिये।"

अब मैं और भरत, हाथ में थैलियां लिए, एक-दूसरे को टांग मारते और हंसी-मजाक करते हुए हॉस्टल की ओर बढ़ रहे थे। हमें पता था कि आज की रात लंबी होने वाली थी, धुएँ और मसालों की खुशबू के बीच पुरानी कहानियाँ फिर से दोहराई जाने वाली थीं। आखिर हॉस्टल की दोस्ती और चिकन की दावत का मेल ही कुछ ऐसा होता है!

दीवार का फाँदना और सामान का 'ट्रांसफर'

शाम ढल चुकी थी और हॉस्टल की ऊँची दीवार हमारे और उस आज़ादी के बीच खड़ी थी, जहाँ आज की रात का 'जश्न' मनना था। राजू काका की दुकान से सारा सामान लेकर हम पिछले रास्ते पर खड़े थे।

मैंने भरत की ओर देखा, जिसके हाथ में मसालों और तेल की थैलियाँ थीं, और मेरे खुद के हाथ में ताज़ा सब्ज़ियां थीं। मैंने दीवार की ऊँचाई नापी और गहरी साँस लेकर कहा, "देख भाई भरत, इस बार 'शक्तिमान' बनने की कोशिश मत करना। सामान बहुत है, अगर एक भी थैली फटी या तेल गिरा, तो आज रात भूखे ही सोना पड़ेगा।"

हमारी योजना एकदम सटीक थी। हमने 'हैंड-ओवर' तकनीक अपनाई। पहले भरत फुर्ती से दीवार पर चढ़ा, मैंने नीचे से एक-एक करके थैलियां उसे थमाईं। जैसे ही सारा रसद-पानी सरहद के पार पहुँचा, हमने भी बंदरों वाली फुर्ती दिखाई और धप्प से दूसरी तरफ कूदे। धूल झाड़ते हुए हम सीधे दूसरी मंज़िल की ओर भागे—मंज़िल थी कमरा नंबर 2327।

दोस्तों का हुजूम और कुंभकरण कुकर

जैसे ही हम गलियारे में पहुँचे, धवल, अक्षय, पारस और कुन्हल का गैंग सामने से आता दिखा। ये लोग मेस का वही उबला हुआ खाना खाने जा रहे थे। जैसे ही धवल की नाक में ताज़े चिकन की महक गई, वह शाकाहारी प्राणी ऐसे भागा जैसे उसने भूत देख लिया हो। वह नॉन-वेज से कोसों दूर रहता था, और उसे डर था कि कहीं हम उसे जबरदस्ती न खिला दें।

तभी दूसरी ओर से मयूर आता दिखा, हाथ में बाल्टी और चेहरे पर परेशानी।

"कित्थे पाजी? बाल्टी लेकर कहाँ का सफर है?" मैंने तंज कसा।

मयूर झुंझलाकर बोला, "अरे यार, हमारी साइड पानी ही नहीं आ रहा। दूसरी विंग से पानी भरने आया हूँ ताकि तुम्हारे ये 'पुरातन काल' के बर्तन धो सकूँ।"

कमरे में पहुँचते ही माहौल बदल गया। अजय और निर्मित पहले ही मोर्चा संभाल चुके थे। थोड़ी ही देर में श्लोक और निशांत भी अपनी पूरी ऊर्जा के साथ प्रकट हुए। कमरा अब एक युद्ध क्षेत्र जैसा लग रहा था जहाँ हथियार थे—चाकू, लहसुन और प्याज।

निशांत और श्लोक ने प्याज-टमाटर काटने की जिम्मेदारी ली, जबकि भरत और निर्मित लहसुन छीलने के 'बोरिंग' काम में लग गए। असली चुनौती थी वह 'इलेक्ट्रिक तगड़ी' (चूल्हा)। भरत ने उसे मेरी तरफ सरकाते हुए कहा, "भाई, इसकी हालत तो आईसीयू वाली है, जरा इसे होश में लाओ।"

मैंने तारों को जोड़ा, प्लग ठीक किया और आखिर में वह चगड़ी चहक उठी। और फिर निकाला गया हमारा 'कुंभकरण कुकर'। यह कोई साधारण कुकर नहीं था। यह हम 'रावणों' का सबसे भरोसेमंद साथी था। साल भर यह किसी कोने में धूल फाँकता रहता था, लेकिन जैसे ही चिकन की बात आती, यह अपनी पूरी शान के साथ बाहर निकलता।

'आग-ए-अंगारा' और तीखे का खौफ

चिकन बनना शुरू हुआ। मसालों की खुशबू पूरे गलियारे में फैलने लगी। तभी अजय और भरत मेरे पास आए और बोले, "भाई, आज जरा हाथ खींचकर मत रखना। एकदम कड़क और तीखा बनाना, ताकि पसीने छूट जाएं।"

मयूर, जो पास ही बैठा था, अचानक उछल पड़ा, "ओए! तीखा मतलब ठीक-ठाक, पिछली बार जैसा नहीं!"

यह सुनते ही कमरे में ठहाकों की गूँज उठी। पिछली बार का वो चिकन... जिसे हमने 'चिकन आग-ए-अंगारा' नाम दिया था। वह इतना तीखा था कि अंत में सबको उसे पानी के गिलास में धो-धोकर खाना पड़ा था। वह दिन याद करके मेरी भी हंसी नहीं रुक रही थी।

तभी बालकनी से एक और चेहरा झाँका। हमारा पुराना यार—जतिन। वह अमरेली का रहने वाला था और मेरा 'नवोदय' का पुराना लंगोटिया यार। वह छुट्टियों में भरत के पास रहने आया था। उसे देखते ही मैंने मज़ाक किया, "लो भाई, अब तो ये हड्डियां भी नहीं छोड़ेगा! आज चिकन बचेगा या नहीं, खुदा ही जाने।"

जतिन ने सिगरेट सुलगाई और बालकनी में जाकर धुआं उड़ाने लगा। वह बातें, वो पुरानी यादें... उस वक्त ऐसा लग रहा था कि दुनिया की सारी खुशियां इसी 10x10 के कमरे में सिमट आई हैं।

ऊनो का 'नंगा नाच' और बालकनी के कांड

जब तक चिकन धीमी आँच पर पक रहा था, तब तक वक्त काटने के लिए 'ऊनो' (UNO) के पत्ते निकाले गए। श्लोक बिस्तर पर कूदा और चिल्लाया, "चलो भाई! शुरू करते हैं ऊनो का नंगा नाच!"

महफ़िल जम गई। कांजी, निशांत, श्लोक, निर्मित, भरत, जतिन, मयूर, अजय और मैं—सब एक घेरे में बैठ गए। तभी भरत का एक और दोस्त, 'भौमिक पटेल' भी टपक पड़ा। वह भी खेल में शामिल हो गया। टीमों की सेटिंग पहले से फिक्स थी।

लेकिन भौमिक और श्लोक के बीच में बैठ जाने से सारी प्लानिंग धरी की धरी रह गई।

मैच के बीच में मैं उठा, "भाइयों, तुम लोग खेलो, मैं ज़रा 'महाराज' (कुकर) की खैरियत ले आऊं।"

बालकनी में पहुँचते ही खुशबू ने बता दिया कि काम हो चुका है। मैंने ढक्कन हटाया, एक छोटा सा पीस निकाला और जैसे ही मुँह में डाला, निर्मित पीछे से आ गया।

"भाई, अकेले-अकेले?" उसने भी एक पीस उठाया और बिना सोचे मुँह में डाल लिया।

अगले ही पल निर्मित "हा-हूँ... हा-हूँ..." करने लगा। चिकन इतना गर्म था कि उसका मुँह जल गया और वह बंदरों की तरह नाचने लगा। यह देखकर कमरे में जो हंसी का फव्वारा फूटा, उसने खेल ही रुकवा दिया।

इसके बाद शुरू हुआ हमारा पसंदीदा काम—'बालकनी कांड'। कमरे की लाइटें बंद कर दी गईं। सामने आईआईटी (IIT) का गर्ल्स हॉस्टल था। हम सब कमीने बालकनी की रेलिंग पर झुक गए और जैसे ही नीचे कोई लड़की दिखती, जोर से "ओए लाल ड्रेस!" या "माल... माल!" चिल्लाकर गायब हो जाते। लड़कियां बेचारी ऊपर-नीचे देखतीं कि ये आवाजें आ कहाँ से रही हैं। एक बार तो एक लड़की ने मुझे देखते-देखते मुस्कुरा दिया, और हम सब ऐसे शरमाए जैसे हमने कोई जंग जीत ली हो।

'कपियो' की एंट्री और अंतिम प्रहार

तभी निशांत ने पूछा, "भाईजान, मेरा एक दोस्त है, उसे भी बुला लूँ क्या?"

मैंने कहा, "अरे भाई, पूछने की क्या बात है? आज तो लंगर लगा है!"

तभी एक लड़का अंदर आया। छोटी हाइट, कंधे तक लंबे बाल और आँखों में एक अजीब सी 'गुंडागर्दी' वाली चमक। उसका नाम था कल्पेश, जिसे हम आगे

जाकर 'कपियो' कहने लगे। किसे पता था कि यह बंदा आगे जाकर मेरा 'क्राइम पार्टनर' बनेगा और हम इसकी बाइक पर पूरी दुनिया नाप देंगे।

रात के 11 बज रहे थे। बिस्तर हटाए गए, कमरे के बीचों-बीच अखबार बिछाया गया। श्लोक और अजय ने सलाद का अंबार लगा दिया था।

जैसे ही कुकर खुला, कमरे में सन्नाटा छा गया। सब बस उस लाल तरी वाले चिकन को देख रहे थे। के.के. (KK) के गाने बैकग्राउंड में बज रहे थे— "पल... याद आएंगे ये पल..."।

फिर शुरू हुआ 'अटैक'। निशांत चावल के ऐसे बड़े-बड़े गोले बना रहा था जैसे कोई साउथ इंडियन फिल्म का विलेन हो। निर्मित और भरत के बीच जैसे कोई 'वर्ल्ड ईटिंग चैंपियनशिप' चल रही थी।

मैंने हंसते हुए कहा, "अबे सलाद भी खा लो, चावल भी है!"

भरत ने एक हड्डी चबाते हुए जवाब दिया, "भाई, सलाद खाकर पेट की जगह क्यों बर्बाद करूँ? आज सिर्फ प्रोटीन चलेगा!"

आधी रात का सुकून

खाना खत्म हुआ। सब ऐसे लेटे थे जैसे कोई युद्ध लड़कर आए हों। कल्पेश एक कोने में चुपचाप बैठा अपना आखिरी पीस चबा रहा था। बर्तन धोने की जिम्मेदारी फिर से उन पर आई जिनकी बारी थी, लेकिन उस रात किसी को आलस नहीं था।

हमने हाथ-मुँह धोए, कपड़े बदले और तय किया कि अब राजू काका के गल्ले पर जाकर 'स्पेशल पान' और सोडा पिया जाए।

आधी रात का 'ऑपरेशन पान-सोडा'

चिकन की उस भारी-भरकम दावत के बाद शरीर भारी हो चुका था, लेकिन मन अभी भी अतृप्त था। हॉस्टल की रस्म थी—बिना पान और सोडे के चिकन की

दावत अधूरी है। आज भी जब मैं आँखें बंद करता हूँ, तो वह रात, वो ठंडी हवा और दोस्तों के ठहाके साफ़ सुनाई देते हैं। हाय... क्या दिन थे वो भी!

पूरा 'गैंग' हॉस्टल के नीचे इकट्ठा हुआ। वही पुरानी दीवार, जो हमारे और हमारी आज़ादी के बीच एक दरबान की तरह खड़ी थी। सिलसिला फिर वही शुरू हुआ—दीवार फाँदने का। कोई लटक रहा था, तो कोई नीचे से धक्का दे रहा था। एक-दूसरे को 'खिस-पछड़ते' हुए, यानी खींचते और गिराते हुए, सबने एक-एक करके सरहद पार कर ली।

पीछे मुड़कर देखा तो भरत और निर्मित अभी भी वहीं खड़े थे। वो दोनों अपनी ही किसी गंभीर चर्चा में खोए हुए थे, जैसे देश की अर्थव्यवस्था का सारा बोझ उन्हीं के कंधों पर हो। मैंने आवाज़ लगाई, "ओए फिलॉसफरों! वहीं घर बसाने का इरादा है क्या? जल्दी कूदो!"

राजू काका का अड्डा और 'भाईजान' वाली सिगरेट

मैं, मयूर, जतिन, श्लोक और निशांत कदम बढ़ाते हुए राजू काका की दुकान की ओर चल दिए। सड़कें सूनी थीं, सिर्फ हमारी चप्पलों की 'चट-चट' और हंसी की आवाज़ गूँज रही थी। दुकान के पास पहुँचते ही श्लोक ने अपनी जेब से बटुआ निकाला और बड़े नवाबिया अंदाज़ में बोला—

"भाईजान... आज मेरी पसंद की सिगरेट ट्राई करो। असली मज़ा तो इसी में है।"

मैंने मुस्कुराते हुए कहा, "चल भाई, तेरी भी हसरत पूरी कर देते हैं, ले आ।"

दुकान के पास ही सीमेंट की कुछ पुरानी सीढ़ियां बनी थीं। मैं, जतिन और निशांत वहाँ किसी रियासत के राजाओं की तरह जम गए। मयूर और श्लोक दुकान के अंदर गए—एक तरफ पान लग रहे थे और दूसरी तरफ सिगरेट के धुएँ के छल्ले बनने की तैयारी थी।

थोड़ी देर में भरत और निर्मित भी हाँफते हुए आ पहुँचे। उन्होंने जैसे ही हमें धुएँ के बीच 'तपस्या' करते देखा, उनकी आँखों में भी चमक आ गई। "अबे! हमें

छोड़कर शुरू हो गए?" भरत ने उलाहना दिया और तुरंत एक कश लगाने के लिए हाथ बढ़ा दिया।

चॉकलेट पान और सोडे की 'डकार'

मयूर, जो हम सबका 'केयरटेकर' भी था, अंदर से एक बड़ी सी ट्रे जैसी प्लेट में सबके लिए 'चॉकलेट पान' बनवाकर लाया। चिकन के तीखेपन के बाद वह मीठा चॉकलेट पान जैसे रूह को सुकून दे गया। मुँह में पान दबाए, हाथ में सोडा की ठंडी बोतल लिए हम सब उस रात के सन्नाटे के मालिक थे।

सोडे की बोतल खुलते ही जो 'फस्स' की आवाज़ आई, वह किसी संगीत से कम नहीं थी। गटक-गटक करके सोडा पिया और उसके बाद जो सामूहिक 'डकार' का कोरस गूँजा, उसने बता दिया कि आज का डिनर सफल रहा।

पान की लाली, सिगरेट का धुआं और सोडे की ठंडक... हम सब मदहोश से होकर वापस हॉस्टल की ओर चल दिए। चलते-चलते हम फिर से वही पुराने किस्से छेड़ने लगे। कोई अपनी क्रश की बातें कर रहा था, तो कोई कल्पेश (कपियो) के आने वाले पंगों की भविष्यवाणी।

रास्ते में चलते हुए मुझे महसूस हुआ कि ये दोस्त सिर्फ दोस्त नहीं, बल्कि मेरी ज़िंदगी का वो हिस्सा हैं जिनके बिना ये कॉलेज की दीवारें सिर्फ पत्थर होतीं। पान खाते-खाते जब हम वापस अपनी उस दीवार के पास पहुँचे, तो मन में बस एक ही बात थी— "कल सुबह की क्लास भले ही छूट जाए, पर ये रात कभी नहीं छूटनी चाहिए।"

हॉस्टल की उस ठंडी रात में, जब हम सब एक साथ नीचे चल रहे थे, तो मन में बस एक ही ख्याल था—डिग्रियां मिलेंगी या नहीं, नौकरी लगेगी या नहीं, पर ये दोस्त और ये 'चिकन वाली रात' हमेशा के लिए अमर हो गई।

राजू काका का पान मुँह में दबाए जब हमने सोडा की बोतल खोली, तो उस 'फस्स' की आवाज़ के साथ ही हमारे दिन भर की थकान और आने वाले कल की चिंता, दोनों हवा में उड़ गए।

अंधेरा, चिड़ियाघर और 'भेडिए' की गूँज

हम अभी हॉस्टल की दहलीज़ पर कदम रख ही रहे थे कि अचानक—क्लिक! पूरे हॉस्टल की बत्तियाँ गुल हो गईं। एक पल के लिए ऐसा सन्नाटा छाया जैसे वक्त थम गया हो, और अगले ही पल वह सन्नाटा एक 'आदिम शोर' में बदल गया।

हॉस्टल की लाइट जाते ही इंसानी सभ्यता का मुखौटा उतर जाता है। अचानक गलियारों से ऐसी आवाज़ें आने लगीं जैसे किसी ने चिड़ियाघर के पिंजरे खोल दिए हों। कोई कुत्ते की तरह भौंक रहा था, कोई गधे की तरह रेंक रहा था, तो कोई तोते और बिल्ली की जुगलबंदी कर रहा था। अंधकार के उस साम्राज्य में हम सब आज़ाद थे। हंसी रुकने का नाम नहीं ले रही थी। जोश में आकर मैंने भी गर्दन ऊपर की और एक लंबी, डरावनी 'भेड़िये' जैसी आवाज़ निकाली— "ऊँऊऊऊऊऊ!"

पूरा हॉस्टल गूँज उठा। हमने तय किया कि इस अंधेरे में कमरे में जाकर किताबी कीड़ा बनने का कोई तुक नहीं है। मोबाइल की टॉर्च जलाई गई और हमारी टोली भरत के कमरे की ओर कूच कर गई।

'फायर फाइटर' और सफेद पाउडर का कोहरा

अभी हम पहली मंज़िल की सीढ़ियाँ चढ़ ही रहे थे कि किसी सिरफिरे ने अपनी पुरानी नोटबुक में आग लगाई और उसे रॉकेट की तरह हॉस्टल के बीचों-बीच बने खुले आँगन (सेंटर) में फेंक दिया। उसे देख हॉस्टल के दूसरे छोर से भी दो-चार जलती हुई किताबें नीचे गिरने लगीं। अंधेरे में वो गिरती हुई आग की लपटें किसी आतिशबाजी जैसी लग रही थीं।

भरत, निर्मित और जतिन फुर्ती से दूसरी मंज़िल पर पहुँच चुके थे। उनके कमरे के ठीक बाहर दीवार पर लाल रंग का 'फायर एक्सटिंग्विशर' (आग बुझाने का यंत्र) टंगा था। निर्मित की शरारती आँखों ने उसे ताड़ा। जतिन ने बिना सोचे उसके हैंडल पर एक ज़ोरदार मुक्का मारा।

फिर क्या था! फ्शशशशशश....!

एक ज़ोरदार धमाके के साथ पूरा फर्श सफेद पाउडर से भर गया। ऐसा लगा जैसे जून की गर्मी में हॉस्टल के गलियारे में बर्फबारी हो गई हो। हम सब पाउडर में नहा चुके थे, आँखें और मुँह सफेद हो गए थे। डर और रोमांच के मारे हमारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। भरत ने फुर्ती दिखाई, उस भारी सिलेंडर को उठाया और सीधे नीचे फेंक दिया, जहाँ किताबों की आग सुलग रही थी।

"भागो! कोई देख न ले!" मैंने फुसफुसाते हुए कहा। हम सब दबे पाँव, परछाइयों की तरह गलियारों में दुबकते हुए मयूर और भरत के कमरे (2327) में जा घुसे। सबके दिल धौंकनी की तरह धड़क रहे थे। अगर पकड़े जाते तो सस्पेंशन पक्का था।

सन्नाटा, साजिश और हॉस्टल कमेटी का खौफ

बालकनी में पहुँचकर मैंने सबको घेरे में लिया। मेरी आवाज़ में इस बार मज़ाक नहीं, एक गंभीर चेतावनी थी। "सुनो भाइयों, आज की रात हमने कुछ नहीं देखा, कुछ नहीं किया। अगर कोई पूछे, तो हम सो रहे थे। कोई किसी का नाम नहीं लेगा!"

तभी, अचानक लाइट आ गई। रोशनी होते ही नीचे का नज़ारा साफ दिखने लगा। हॉस्टल कमेटी के सदस्य, वार्डन और कुछ सीरियस छात्र नीचे आँगन में जमा हो गए थे। वो सफेद पाउडर वाला सिलेंडर बीचों-बीच पड़ा था। माहौल तनावपूर्ण था। वार्डन चिल्ला रहे थे, "जिसने भी यह हरकत की है, उसे बख्शा नहीं जाएगा! यह सरकारी संपत्ति का नुकसान है, सीधा प्रिंसिपल के पास ले जाएंगे!"

हम ऊपर बालकनी से यह सब 'मासूम' बनकर देख रहे थे, जैसे हमें कुछ पता ही न हो। मैंने सबको आखिरी बार हिदायत दी, "अभी मामला गरम है। सब अपने-अपने कमरे में जाओ। ढाई बजे जब सब सो जाएंगे, तब मयूर के कमरे में दोबारा मीटिंग होगी। अब निकलो!"

टॉपर्स का कमरा और ढाई बजे का इंतज़ार

मैं जब अपने कमरे में पहुँचा, तो वहाँ का नज़ारा बिल्कुल अलग था। बाहर दुनिया जल रही थी और मेरे रूममेट्स—जो अपनी-अपनी ब्रांच के 'चिड़ीमार' यानी

टॉपर्स थे—शांति से अपनी मेज़ पर लैंप जलाकर पढ़ रहे थे। कमरे में इतना सन्नाटा था कि सुई गिरने की आवाज़ भी सुनाई दे जाए।

मैने भी शरीफ बनने का नाटक किया और अपने बिस्तर पर जाकर बैठ गया। एक तरफ हाथ में असाइनमेंट था, और दूसरी तरफ दिमाग में वह 'फायर एक्सटिंग्विशर' वाला सीन घूम रहा था। उन टॉपर्स के बीच बैठकर पढ़ना किसी सजा से कम नहीं था, लेकिन पकड़े जाने के डर ने मुझे एक 'आदर्श छात्र' बना दिया।

पढ़ते-पढ़ते और क्लास नोट्स पलटते हुए वक्त का पता ही नहीं चला। जैसे ही घड़ी की सुइयाँ 2:30 पर पहुँची, मैंने धीरे से अपनी चप्पलें उठाईं और बिल्ली की तरह दबे पाँव कमरे से बाहर निकला। असली रोमांच तो अब शुरू होने वाला था।

आधी रात का 'एलियन' हमला: हॉस्टल की एक अनकही दास्तां

मन में भारीपन और थोड़ी झुंझलाहट लिए मैंने तय किया कि अब नीचे अकेले बैठने का कोई फायदा नहीं है, ऊपर मयूर और भरत के कमरे में ही चलता हूँ। सीढ़ियां चढ़ते हुए मैंने निर्मित को फोन लगाया, "कहाँ है भाई? चल ऊपर आजा, मयूर के रूम में महफ़िल जमानी है।"

सामने से निर्मित की खिलखिलाती आवाज़ आई, "अबे तू अब कॉल कर रहा है? मैं तो कब से यहीं ऊपर वाले कमरे में डेरा डाले बैठा हूँ। तू भी जल्दी आ, यहाँ माहौल बना हुआ है।"

जैसे ही मैंने कमरे का दरवाज़ा खोला, नज़ारा कुछ और ही था। कमरे के बीचों-बीच कुछ दोस्त पूरी शिद्दत से 'ऊनो' (Uno) के पत्तों की बाजी पलट रहे थे, तो वहीं कुछ लोग बालकनी में ऐसे गंभीर होकर बैठे थे जैसे देश का बजट इन्हीं को पास करना हो। टेंशन उनके चेहरों पर साफ़ झलक रही थी। मैं खामोशी से बालकनी की तरफ बढ़ा और बिना किसी से कुछ कहे, उस अंधेरे कोने में जाकर दुबक गया।

कमरे में मयूर ने अपनी पसंद के के.के. (KK) के सदाबहार गाने चला रखे थे। उसकी मधुर आवाज़ माहौल को और भावुक बना रही थी, पर उस वक़्त मेरा मूड कुछ उखड़ा हुआ था। मैंने झुंझलाकर मयूर से कहा, "भाई, तू ये गाने बंद ही रहने दे।

और ओए निर्मित, जब सब यहाँ थे, तो एक बार कॉल तो कर देता? मैं भी कब का ऊपर आ चुका होता।"

सबकी खामोशी देख मुझे लगा कि माहौल को थोड़ा हल्का करना ज़रूरी है। मैंने सबको तसल्ली देते हुए कहा, "देखो भाई लोगों, फालतू की टेंशन लेना बंद करो। किसी को कानो-कान खबर नहीं होगी कि ये कांड किसने किया है। अंधेरा इतना था कि खुद हमें नहीं पता कि असली खिलाड़ी कौन था, तो बाहर वालों को क्या पता चलेगा? बस रिलैक्स करो।"

घड़ी की सुइयां रात के 3 बजे का इशारा कर रही थीं। हॉस्टल की दूसरी मंज़िल की उस बालकनी में हम सब यार एक साथ थे। कोई अपनी पुरानी यादें ताज़ा कर रहा था, तो कोई भविष्य की चिंता में डूबा था। मैं कोने में बैठा बस उनकी आवाज़ों और रात के सन्नाटे को महसूस कर रहा था। नींद अब आंखों पर भारी पड़ने लगी थी, तो मैंने सोचा कि अब अपने कमरे में जाकर चैन से सो जाना चाहिए।

तभी... अचानक एक साया कमरे के अंदर दाखिल हुआ। इससे पहले कि वो कुछ समझ पाता, किसी शातिर दिमाग ने कमरे की लाइट का स्विच 'ऑफ' कर दिया। पूरा कमरा घुप अंधेरे में डूब गया।

बालकनी में बैठे-बैठे ही मेरे कान खड़े हो गए। मुझे समझ आ गया कि शिकार जाल में फंस चुका है। ये और कोई नहीं, हमारा प्यारा दोस्त 'पारस' था, जिसे हम सब प्यार से (और उसकी हरकतों की वजह से) 'एलियन' बुलाते थे। लाइट इसलिए बंद की गई थी ताकि 'अंधाधुंध कुटाई' का ऑपरेशन बिना किसी पहचान के सफल हो सके।

उस अंधेरे में जो जिसके हाथ लगा, उसने वही उठा लिया। किसी के हाथ में इंजीनियरिंग की वो मोटी-मोटी भारी किताबें थीं जो साल भर नहीं खुलीं, तो किसी ने पेन को ही हथियार बना लिया। बूट्स, चप्पलें, कंबल की भारी गांठें, और गीले तौलिये—सब तैयार थे। मैंने भी पास पड़ी मयूर की एक सख्त जींस उठाई और उसे हाथ में लपेट लिया।

दिक्कत बस एक थी—अंधेरा घना था और पारस का रंग भी कुछ वैसा ही था, वो साला दिख ही नहीं रहा था! मयूर, भरत, निर्मित, अजय और कांजी... सब के सब शिकारी कुत्तों की तरह घात लगाए बैठे थे। मयूर और भरत के चेहरे पर जो मुस्कान थी, उसे देखकर साफ लग रहा था कि वो सदियों से इसी पल का इंतज़ार कर रहे थे कि कोई बकरा कमरे में आए और वो अपनी भड़ास निकालें।

जैसे ही पारस कमरे के बीच पहुँचा, उस पर 'हमलों की बारिश' शुरू हो गई। 'धप-धप... चटाक-पटाक' की आवाजों से कमरा गूँज उठा। कोई कंबल की गांठ मार रहा था, तो कोई झाड़ू से उसकी 'आरती' उतार रहा था। मैंने भी बालकनी के दरवाज़े के पीछे से मयूर की उस जींस से उसे ऐसा प्रसाद दिया कि बेचारा चीख भी न सका। वो बस इधर-उधर हाथ-पाँव मार रहा था।

कुटाई के बाद जब थोड़ी शांति हुई, तो कांजी ने हंसते हुए एक ऐसा जुमला फेंका कि हम सब लोट-पोट हो गए। कांजी बोला, "अबे ओए पारस! तुझे ये हॉस्टल मंगल ग्रह लगता है क्या? कि जब मर्जी आई, अपना उड़न तश्तरी लेकर आया, यहाँ का खाना खाया और नंगा नाच करके चला गया?"

कांजी की ये बात सुनते ही पूरे कमरे में ठहाकों का ऐसा सैलाब आया कि सबकी टेंशन हवा हो गई। हम सब पागलों की तरह हंस रहे थे और बेचारा पारस 'एलियन' अपनी धूल झाड़ते हुए बस हमें देख रहा था। हॉस्टल की वो रात और वो 'एलियन' की कुटाई आज भी याद आती है, तो हंसी नहीं रुकती।

अधूरी मोहब्बत और एक रहस्यमयी पुकार

हॉस्टल के उस कमरे में हंसी के फव्वारे अब शांत हो चुके थे। 'एलियन' उर्फ पारस की ऐतिहासिक कुटाई के बाद सब अपनी-अपनी जीत के किस्से सुनाते हुए बिस्तरों पर ढह गए थे। मयूर अपनी फटी हुई जींस देख रहा था, जिसे मैंने हथियार बनाया था, और कांजी अब भी रह-रह कर मंगल ग्रह वाली बात पर बुदबुदा रहा था।

सबने एक-दूसरे को 'गुड नाइट' कहा। लाइटें बुझ गईं, पर मेरी आँखों से नींद कोसों दूर थी। एक अजीब सी बेचैनी थी, जैसे तकदीर उस रात मेरे लिए कुछ और

ही बुन रही थी। मैं दबे पाँव कमरे से बाहर निकला। सीढ़ियाँ उतरकर अपने नीचे वाले फ्लोर की ओर बढ़ा, लेकिन कमरे का दरवाज़ा खोलने का मन नहीं हुआ।

कदम खुद-ब-खुद उस लंबी गैलरी की ओर मुड़ गए, जो हॉस्टल के एक कोने में जाकर खत्म होती थी। यह मेरी पसंदीदा जगह थी। यहाँ रात के सन्नाटे में नेटवर्क भी पूरा मिलता था और सुकून भी। गैलरी की रेलिंग पर हाथ रखे मैं दूर शहर की टिमटिमाती लाइटों को देख रहा था। हवा में एक ठंडक थी जो ज़हन को ताज़ा कर रही थी, पर दिल के अंदर एक पुरानी आग अब भी सुलग रही थी।

"वैशाली..."

एक साल बीत गया, पर यह नाम आज भी सीने में चुभन पैदा कर देता था। मेरी 'एक्स'। सुना था उसकी शादी हो गई है, पर ये दिल मानने को तैयार ही कहाँ था? मैं हर रोज़ उसे एक मैसेज करता—कभी दर्द भरा, कभी बस एक 'हेलो'। फिर डर और आत्मसम्मान की लड़ाई में उसे डिलीट भी कर देता। उसे कॉल करने की हिम्मत कभी नहीं हुई, क्योंकि किसी और की अमानत को याद करना शायद गुनाह था, पर मोहब्बत कब कायदे-कानून मानती है?

मैंने जेब से फोन निकाला। एक पुराना सैड सॉन्ग प्ले किया। गायक की आवाज़ रात के सन्नाटे को चीरती हुई मेरे जख्मों पर नमक छिड़क रही थी। मैंने फोन को साइड में रखा और सामने वाले हॉस्टल की खाली खिड़कियों को ताकने लगा। यादों का रेला चल ही रहा था कि अचानक फोन की वाइब्रेशन ने मुझे चौंका दिया।

अंधेरे में फोन की स्क्रीन चमक उठी। मेरा दिल ज़ोर से धड़का। एक पल को लगा, "क्या वैशाली ने मेरा मैसेज देख लिया? क्या उसे मेरी याद आ गई?" एक उम्मीद भरी मुस्कान मेरे होंठों पर आई। लेकिन जैसे ही फोन उठाया, स्क्रीन पर एक अनजान नंबर चमक रहा था।

"धत् तेरे की! कोई स्कैम कॉल होगा," मैंने झुंझलाकर कॉल काट दिया और गहरी सांस ली। शांति फिर से लौट आई थी। मैं वहाँ से उठा और अपने कमरे की तरफ बढ़ने लगा। तभी... वही नंबर फिर से चमक उठा।

इस बार कुछ अलग था। मन में एक अजब सी सिहरन हुई। मैंने बिना सोचे-समझे 'रिसीव' का बटन दबा दिया। फोन कान से लगाया, पर मेरी ज़ुबान से 'हेलो' निकलता, उससे पहले ही दूसरी तरफ से सिसकियों की आवाज़ आई।

कोई लड़की दूसरी तरफ फूट-फूट कर रो रही थी। उसकी रुलाई में एक ऐसा दर्द था जिसे सुनकर कलेजा मुंह को आ जाए। मेरा गला सूख गया। "हेलो? कौन है? आप रो क्यों रही हैं?" मैंने घबराहट में पूछा।

तभी, उन सिसकियों के बीच से एक कांपती हुई आवाज़ उभरी, जो जानी-पहचानी भी थी और अंजानी भी।

"मीनल... मैं... मैं मीनल बोल रही हूँ..."

मेरा पूरा शरीर सुन्न पड़ गया। मीनल? यह नाम सुनते ही अतीत के कई बंद दरवाज़े एक साथ खुल गए। रात के 3:30 बजे, हॉस्टल की उस सूनी गैलरी में, एक अंजान नंबर से मीनल का रोते हुए फोन आना महज इत्तेफाक नहीं था।

तकदीर ने अपना पासा फेंक दिया था। हॉस्टल की वो हंसी-मजाक वाली रात अब एक ऐसे रहस्य में बदल चुकी थी, जहाँ से वापसी का कोई रास्ता नहीं दिख रहा था।

एक अनजान सिसकी और आधी रात का गुनाह

फोन की दूसरी तरफ से आती उस लड़की की रुलाई ने मेरे रोंगटे खड़े कर दिए थे। वह सिसकते हुए बस एक ही बात दोहरा रही थी, "तुम ऐसा क्यों कर रहे हो मेरे साथ? आखिर मेरी गलती क्या है?"

एक पल के लिए मेरा दिमाग सुन्न पड़ गया। फिर मुझे लगा कि शायद यह मेरे उन्हीं कमीने दोस्तों की कोई नई चाल है। हॉस्टल में अक्सर ऐसा होता था—कोई आवाज़ बदलकर लड़की बन जाता और दूसरे की फिरकी लेता। मैं दबे पाँव वापस मयूर के कमरे की तरफ भागा। दिल में एक ही ख्याल था, "बेटा मयूर, अगर ये तेरी शरारत हुई तो आज तेरी खैर नहीं!"

मैंने कमरे की कांच वाली खिड़की से झाँका। अंदर का नज़ारा बिलकुल अलग था। मयूर, भरत और बाकी सब अपनी ही मस्ती में चूर थे, कोई तकिए से लड़ रहा था तो कोई खर्राटे भरने की तैयारी में था। उनमें से कोई भी फोन पर नहीं था। अचानक फोन से फिर वही रेशमी लेकिन कांपती हुई आवाज़ आई— **"हेलो.... हेलो..... सुन रहे हो ना? प्लीज चुप मत रहो..."**

आवाज़ इतनी मासूम और गहरी थी कि एक पल को मुझे लगा कि शायद यह 'वैशाली' ही है। शायद रोने की वजह से उसका गला बैठ गया है। मैंने अपनी धड़कनों को काबू किया और अनजान बनते हुए पूछा, "हेलो... कौन? वैशाली? तुम वैशाली बोल रही हो क्या?"

सामने से एक गहरी सांस लेने की आवाज़ आई, "मैं मीनल हूँ... सिर्फ मीनल!"

"पर आप हैं कौन? और मुझे फोन क्यों कर रही हैं?" मैंने उलझन में पूछा।

वह फिर से रोने लगी, उसका गला भर आया था। "देखो, अब ये अंजान बनने का नाटक बंद करो। जो हुआ सो हुआ... मैंने तुम्हें माफ़ किया, बस अब और मत तड़पाओ।"

मुझे समझ आ गया कि मामला गलतफहमी का है। मैंने उसे टोकते हुए कहा, "सुनिए, मेरी बात गौर से सुनिए। आप जिसे समझ रही हैं, मैं वो नहीं हूँ। आपने शायद गलत नंबर लगा दिया है। प्लीज, पहले अपना नंबर चेक कीजिए और खुदा के वास्ते रोना बंद कीजिए, मुझे अच्छा नहीं लग रहा।"

लेकिन वह मानने को तैयार ही नहीं थी। उसने अधिकार से कहा, "मान भी जाओ ना! क्यों तड़पा रहे हो? क्या मैं तुम्हारी आवाज़ नहीं पहचानती? क्या इतने साल का प्यार इतना खोखला था कि एक पल में आवाज़ पराई हो गई?"

मुझे लगा कि शायद मेरी आवाज़ उसके बॉयफ्रेंड से मिलती-जुलती होगी। मैंने आखिरी बार कोशिश की, "मैडम, आप नंबर मिलाइए। मेरा नंबर अलग होगा, उसका अलग। प्लीज चेक कीजिए।" इतना कहकर मैंने फोन काट दिया।

मैं अपने कमरे की तरफ बढ़ा ही था कि फोन फिर से चीख उठा। वही नंबर! इस बार मेरा गुस्सा सातवें आसमान पर था। मैंने फोन उठाते ही लगभग चिल्लाते हुए कहा, "अब क्या है भाई? कितनी बार कहूँ कि गलत नंबर है!"

उसने सहमते हुए लेकिन दृढ़ता से कहा, "नाराज़ मत हो... नंबर वही है। मैंने दोबारा चेक किया है।"

बाद में जब मैंने गौर किया, तो माजरा समझ आया। मेरा नंबर था **9033565509** और उसके बॉयफ्रेंड का नंबर था **9033555609**। सिर्फ एक अंक का हेर-फेर, और तकदीर ने हमें एक तार से जोड़ दिया था।

उसकी आवाज़ में एक ऐसी बेबसी थी कि मेरा गुस्सा ठंडा पड़ गया। मुझे लगा कि इस लड़की को इस वक्त किसी के साथ की ज़रूरत है। मेरे पास उस वक्त 'हिम्मत' और 'सलाह' किलो के भाव में मौजूद थी, आखिर हॉस्टल लाइफ ने हमें और सिखाया ही क्या था?

मैं वही गैलरी की ठंडी ज़मीन पर बैठ गया। उसने रुंधे गले से बताया, "मैं कब से उसे कॉल कर रही हूँ, पर वो रिसीव ही नहीं कर रहा। मुझे समझ नहीं आ रहा मैं क्या करूँ।"

मैंने बड़े भाई वाले अंदाज़ में कहा, "देखो, रात के 4 बजने को हैं। हो सकता है वो सो गया हो या फोन साइलेंट पर हो। तुम भी सो जाओ, सुबह बात करना।"

"मुझे नींद नहीं आ रही," उसने लंबी सांस ली, "मैं अपने घर की छत पर अकेली बैठी हूँ। कमरे में दम घुटता है।"

"कुछ खाया तुमने?" मैंने पूछा।

उसने धीमे से कहा, "नहीं, भूख मर गई है।"

तभी उसने वो बात कही जिसने मेरे पैरों तले ज़मीन खिसका दी। वह रुआंसी आवाज़ में बोली, **“मैं प्रेग्नेंट हूँ... और वो अब मुझसे ब्रेकअप करना चाहता है।”**

मैं सन्न रह गया। मेरे कान बजने लगे। "क्या? ये सब कब से चल रहा है तुम दोनों का?" अब मेरी दिलचस्पी और चिंता दोनों बढ़ गई थीं।

"मैं अभी कॉलेज के फर्स्ट ईयर में हूँ," उसने बताया, "हम स्कूल के दिनों से एक-दूसरे से प्यार करते हैं। मैं अभी सिर्फ 19 साल की हूँ।"

मेरा खून खौल उठा। "इतनी कम उम्र में ये क्या पागलपन कर दिया तुम लोगों ने!" मैंने गुस्से में कहा।

उसने सफाई देते हुए कहा, "ज्यादा मत सोचो... हम शादी करने वाले हैं। सब ठीक हो जाएगा। मैं मना करती रही, पर उसने ज़ोर दिया। हम होटल में मिले, और फिर ये सिलसिला चल पड़ा।"

उसकी बातें सुनकर मुझे दुख भी हो रहा था और गुस्सा भी। गैलरी में अब ठंड बढ़ गई थी। मैंने उसे समझाया, "देखो मीनल, रात बहुत हो गई है। यहाँ छत पर रहने से कुछ नहीं होगा। जाओ, कुछ खाओ और सोने की कोशिश करो। कल कॉलेज भी जाना होगा। नीचे उतर कर अपने कमरे में जाओ।"

उसने हार मानकर कहा, "ठीक है... आप सो जाओ। मैं भी कोशिश करती हूँ, पर मुझे घुटन हो रही है। जब नींद आएगी, सो जाऊँगी।"

मैंने उससे वादा किया कि हम कल बात करेंगे। मैं अपने कमरे में आया और बेड पर लेट गया। पर नींद? वो तो अब कोसों दूर थी। आँखों के सामने बार-बार एक ही सवाल आ रहा था—कौन होगी वो? कैसी दिखती होगी? उसकी आवाज़ में वो जो खनक थी, वो उस दर्द के पीछे छुप गई थी।

मन में एक अजीब सी हलचल थी। मैंने फोन उठाया और उसे एक मैसेज टाइप किया: **"गुड नाइट! स्वीट ड्रीम्स। परेशान मत होना, सब ठीक हो जाएगा। हम कल बात करेंगे।"**

उधर से तुरंत रिप्लाई आया, बोल्ड अक्षरों में— **"ओके... गुड नाइट!"**

वो आखिरी मैसेज देखकर न जाने कब मेरी आँख लग गई। पर उस रात के सपने में कोई वैशाली नहीं थी, बल्कि एक अनजान 'मीनल' थी जो धुंधली सी छत पर खड़ी रो रही थी।

सुलगते सवाल

अगली सुबह जब सूरज की पहली किरण ने हॉस्टल की खिड़की पर दस्तक दी, तो मेरी आँखों में वह पुरानी चमक नहीं थी। रात भर मीनल की उन सिसकियों और उस भयानक सच ने मेरी नींद उड़ा दी थी। सुबह के 11 बज रहे थे। मैं टॉयलेट में बैठा था, जहाँ अक्सर इंसान दुनिया भर की फ़िक्र छोड़ देता है, पर मेरा दिमाग उसी टेरेस पर अटका था जहाँ मीनल ने अपनी रात गुज़ारी थी।

बिना सोचे-समझे मैंने फोन निकाला और उसे एक छोटा सा मैसेज टाइप किया— "हाय... गुड मॉर्निंग। कैसी हो?"

मैसेज भेजकर मैं तैयार हुआ। कांजी बाहर मेरा इंतज़ार कर रहा था, "अबे ओए! आज क्या कॉलेज में ही बसने का इरादा है? जल्दी चल!"

रास्ते में हम पैदल ही कॉलेज की ओर बढ़ रहे थे, पर मेरा हाथ बार-बार फोन की तरफ जा रहा था। मैंने उसे कॉल लगाया... रिंग गई, पर कोई जवाब नहीं। मैंने फिर से मिलाया, पर नतीजा वही। कांजी मेरी हरकतों को गौर से देख रहा था। उसे शक होने लगा था कि कुछ गड़बड़ है। वह मेरे पास आया और कंधे पर हाथ रखकर बोला, "भाई, कोई टेंशन है क्या? सुबह से तू अपने आप में नहीं है।"

मैंने तुरंत बात संभाली, "नहीं तो... कुछ नहीं भाई। बस मम्मी को कॉल कर रहा था, कोई उठा नहीं रहा। शायद सब बाहर गए होंगे।" कांजी ने सिर हिलाया, पर उसकी आँखों में अब भी सवाल थे।

दिन ढल गया, शाम हुई और फिर रात का साया गहराने लगा। मैंने उस दिन न जाने कितनी बार मीनल को कॉल किया, कितने ही मैसेज भेजे, पर उधर से कोई आहट नहीं थी। न कोई रिप्लाई, न कोई 'कॉल बैक'। ऐसा लग रहा था मानो वह आवाज़ रात के अंधेरे में ही कहीं गुम हो गई हो।

रात को हॉस्टल के मेस में खाना खाने के बाद हमारी टोली हमेशा की तरह सोडा पीने निकली। यह हमारा 'डेली रूटीन' था, जहाँ हम दिन भर की थकान और लेक्चर की बोरियत मिटाते थे। जब सोडा बनकर आया, तो मैंने अपना गिलास लिया और बाकी लड़कों से थोड़ा दूर, एक सुनसान कोने में जाकर बैठ गया।

मेरी इस बेरुखी ने मयूर का ध्यान खींच लिया। उसे लगा कि आज मेरा व्यवहार कुछ बदला-बदला सा है। वह धीरे से मेरे पास आया और आवाज़ दी, "भाई... ओ भाई!"

मैं कहीं और ही खोया हुआ था। मुझे उसकी आवाज़ तब सुनाई दी जब उसने मेरे कंधे को हिलाया। मैंने चौंककर पूछा, "क्या? क्या हुआ?"

मयूर ने अपनी गहरी आँखों से मुझे देखते हुए पूछा, "अबे तू बता क्या हुआ है? सब ठीक तो है ना? तू कहीं और ही है आज।"

मैंने अपनी परेशानी छुपाते हुए कहा, "हाँ... हाँ भाई, सब ठीक है। बस थोड़ा सिर भारी है।" पर सच तो यह था कि मेरे अंदर सब कुछ उथल-पुथल था। जतिन, भरत और निर्मित अपनी पुरानी मस्ती में चूर थे, लतीफे सुना रहे थे, पर मैं उन्हें पूरी तरह इग्नोर कर रहा था। उनकी हंसी मुझे चुभ रही थी क्योंकि मेरे कानों में अब भी मीनल की वो आवाज़ गूँज रही थी— 'मैं प्रेग्नेंट हूँ'।

भरत भी मेरी हालत देखकर हैरान था। वह पास आया और बोला, "भाई, चिल कर। सब ठीक है?"

"हाँ भाई, बिल्कुल ठीक!" मैंने जवाब दिया और गिलास पटकते हुए बोला, "चलो यार, अब हॉस्टल चलते हैं। मुझे एक असाइनमेंट पूरा करना है। फिर एक-दो बजे मयूर तेरे रूम में महफ़िल जमाते हैं।"

हम सब हॉस्टल की ओर पैदल निकल पड़े। रास्ते में 'अन्ना' की दुकान पर उसे गुड नाइट बोला। हमारे बॉयज़ हॉस्टल से थोड़ी दूर पहले ही गर्ल्स हॉस्टल पड़ता था। यह वो जगह थी जहाँ लड़कों की गैंग की असली मस्ती शुरू होती थी। सब अपनी-अपनी पसंद की लड़कियां चुन रहे थे।

"देख वो वाली मेरी... और वो जो खड़ी है, वो उसकी!" निर्मित हंसते हुए बोला।

तभी मयूर ने तंज कसा, "और वो जो मोटी वाली है, वो तो पक्का निर्मित की ही है!"

मयूर यहीं नहीं रुका, उसने हॉस्टल की वार्डेन की ओर इशारा किया ओर्र मुझे ओर सब को चिल्ला कर कहा कि ये वाली तो पक्का सागर की। हाथ से इशारा किया ये तू रख ले भाई। सब जोर-जोर से ठहाके मार रहे थे, गलियां गूँज रही थीं।

पर मैं? मैं उस शोर के बीच भी एक कब्रिस्तान जैसी शांति लिए चल रहा था। मुझे लड़कियों को देखने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। मेरा दिल बस एक ही बात सोच रहा था— उस हज़ारों खिड़कियों वाले गर्ल्स हॉस्टल में क्या मीनल भी कहीं बैठी होगी? क्या वह भी खिड़की से हमें देख रही होगी?

वह रात बहुत ही अजीब थी। कुछ तो था जो बदलने वाला था, और वह बदलाव सुखद नहीं लग रहा था।

धुआं, दोस्ती और खामोश सिसकियां

हॉस्टल पहुँचने से ठीक पहले रास्ते में हमें 'रावल काका' मिल गए। काका हॉस्टल के वार्डन थे और अपनी पुरानी खटारा साइकिल पर शान से चले जा रहे थे। लड़कों की टोली को शरारत सूझी; हमने आव देखा न ताव, काका की चलती साइकिल पर जबरदस्ती पीछे से चढ़ गए। मैं सबसे पहले कूदा, फिर भरत और निर्मित भी चिपक गए। एक छोटी सी साइकिल और उस पर चार हट्टे-कट्टे जवान!

उधर मोरी ने मौका देखते ही मोबाइल निकाला और इस ऐतिहासिक दृश्य की वीडियो बनाने लगा। बेचारे रावल काका! उनका संतुलन बिगड़ा, हैंडल लहराया और 'धड़ाम' से वो साइकिल समेत ज़मीन पर। हम सब सकपका गए। मैंने और मयूर ने दौड़कर काका को उठाया, उनकी धूल झाड़ी और इससे पहले कि वो अपनी छड़ी निकालते, हम सब वहां से सरपट भाग निकले। भागते-भागते फेफड़ों में हवा कम पड़ रही थी, पर हंसी रुकने का नाम नहीं ले रही थी। उसी हंसी-मजाक के शोर में हम सब अपने-अपने कमरों में घुस गए।

कमरे में कदम रखते ही माहौल एकदम बदल गया। मेरे रूममेट्स—दो-दो नीलेश और राजू भाई—पूरी शिद्दत से पढ़ाई में जुटे थे। सेमेस्टर का भूत सबके सिर पर सवार था। मैंने राजू भाई की असाइनमेंट कॉपी झपटी और खुद भी लिखने बैठ गया।

तभी एक नीलेश, जिससे मेरी गाढ़ी दोस्ती थी, चुटकी लेते हुए बोला— "ओह हो... आज सूरज किधर से निकला है? जनाब पढ़ाई कर रहे हैं! क्या बात है!"

मैंने उसे तिरछी नज़रों से घूरकर देखा, "साले चुपचाप अपना काम कर, वरना आज हाथ साफ़ कर दूँगा तुझ पर।" वो समझ गया कि मेरा मूड आज थोड़ा 'शॉर्ट' है, इसलिए वो मुस्कुराकर चुप हो गया।

रात के एक बज चुके थे। लिखते-लिखते हाथ सुन्न हो गए थे। मैंने किताबें बंद कीं और सोचा कि मयूर के रूम में चलते हैं, वो लोग पक्का महफ़िल जमाए बैठे होंगे।

कमरे से बाहर निकला तो गैलरी में 'साउथ गैंग' का कब्ज़ा था। चार दोस्त और एक सिगरेट! मुझे उनकी यह इकोनॉमी आज तक समझ नहीं आई—हर एक घंटे में बाहर आते थे और एक ही सिगरेट में बारी-बारी से कस मारकर उसे ऐसे खत्म करते थे जैसे कोई बेशकीमती खज़ाना हो। वहां अजय, प्रतीक, शैशव और निशांत खड़े थे।

मैंने बिना कुछ कहे निशांत के हाथ से सिगरेट झपटी और कहा, "ला यार, आज मुझे इसकी ज़्यादा ज़रूरत है।"

निशांत ने मेरे हाथ में 'थर्मोडायनामिक्स' की भारी-भरकम बुक देखी और चकित होकर बोला, "भाई! आज से ही टॉपर बनने की तैयारी? अभी तो एग्जाम में सदियाँ बाकी हैं!" वो 'टॉपर-टॉपर' कहकर मुझे चिढ़ाने लगा। मैंने बाकी बची सिगरेट अजय की तरफ उछाली और तेज़ कदमों से मयूर के कमरे की ओर बढ़ गया।

अंदर का नज़ारा किसी जंग के मैदान जैसा था। सब 'ऊनो' (Uno) खेल रहे थे और इतना शोर था कि कान फटने लगें। आज कांजी और अजय की शामत आई थी। जतिन, निर्मित और भरत ने मिलकर उन दोनों को घेर रखा था। मयूर हमेशा की

तरह कोने में बैठकर अपनी 'सेफ साइड' चालें चल रहा था। मैं चुपचाप बालकनी में गया और वहां रखी एक पुरानी कुर्सी पर अपनी दुनिया समेट कर बैठ गया।

तभी निर्मित आया और बोला, "अबे ओ एकांतवासी! चल अंदर आ, मिल कर खेलते हैं।"

पीछे-पीछे मयूर भी आ गया, "चल ना भाई, क्यों भाव खा रहा है?"

मयूर ने शायद मेरी आंखों में छुपी वो बेचैनी पढ़ ली थी। उसने म्यूजिक सिस्टम की आवाज़ धीमी की, जहाँ के.के. का कोई दर्द भरा गाना बज रहा था। वो मेरे पास वाली कुर्सी पर बैठा और बोला, "भाई, क्या हुआ है? मैं शाम से नोटिस कर रहा हूँ।"

मैंने हड़बड़ा कर पूछा, "क्या? और कब से?"

"सब देख रहा हूँ मैं," मयूर ने संजीदगी से कहा, "चाय की टपरी से लेकर डिनर तक, फिर सोडा शॉप पर भी तू गुमसुम था और अभी यहाँ भी तू ऐसे बैठा है जैसे दुनिया का सारा बोझ तेरे कंधों पर हो। पैसे-वैसे की कोई किल्लत है तो बता, मैं कुछ जुगाड़ कर दूँगा।"

उसकी दोस्ती और फिक्र देख कर मेरा दिल भर आया, पर मैं उसे मीनल और उस 'अधूरे सच' के बारे में कैसे बताता? मैंने बस इतना कहा, "नहीं भाई, सब ठीक है। तू टेंशन मत ले।"

हमारी सीरियस बातें देख कर अंदर की ऊनो गैंग भी खेल छोड़कर बालकनी में आ गई। धुआं उड़ाने का दौर फिर शुरू हुआ। भरत के हाथ से मैंने सिगरेट ली, जतिन और कांजी ने भी अपने-अपने 'लाइटर' जला लिए। बालकनी कुछ ही पलों में धुएं के बादलों से भर गई। मयूर अकेला नॉन-स्मोकर था, पर उसे हमारी इन आदतों से कोई चिढ़ नहीं थी, वो बस हमें देखता रहता था।

बातों-बातों में पता चला कि अजय और कांजी को ऊनो में कैसे फंसाया गया था। उनकी रणनीतियों की बातें सुनकर मुझे हंसी आ गई। तभी अजय ने जोश-जोश में एक लंबा कस खींचा और उसे ऐसी 'खों-खों' वाली खांसी उठी कि उसकी आँखें लाल हो गईं। हम सब पागलों की तरह हंसने लगे। भरत ने उसके सिर पर एक प्यार

भरी चपत लगाई और बोला, "साले, जब पीनी नहीं आती तो हमारी सिगरेट क्यों बर्बाद कर रहा है?"

हंसी के ठहाकों के बीच श्लोक और निशांत भी बालकनी में आ गए। लेकिन धीरे-धीरे माहौल फिर से शांत होने लगा। रात की स्याही और गहरी हो गई थी। अजय को नींद आ रही थी, उसने 'अंधेरा कायम रहे' कहते हुए बालकनी की लाइट बंद कर दी और सोने चला गया।

अब उस काली बालकनी में सिर्फ सिगरेट की लाल चिंगारियां चमक रही थीं और मेरे दिल में मीनल का वो आख़िरी मैसेज— **"ओके... गुड नाइट!"** किसी अलार्म की तरह बज रहा था। कल क्या होगा, किसी को नहीं पता था।

सन्नाटा, साये और श्मशान की वो रात

रात के 3 बज रहे थे। बालकनी में अंधेरा था और सिगरेट की कुछ जलती हुई चिंगारियां जुगनू जैसी लग रही थीं। माहौल में एक अजीब सी भारीपन थी, जिसे कम करने के लिए निर्मित ने भूतों का किस्सा छेड़ दिया।

निर्मित ने आवाज़ को थोड़ा धीमा और रहस्यमयी बनाते हुए शुरू किया, "मेरे गाँव में एक बरगद का बहुत पुराना और विशाल पेड़ है। कहते हैं उस पर एक बूढ़ी अम्मा का साया है, जिसने सालों पहले वहीं खुदकुशी कर ली थी। गाँव में मशहूर है कि अगर कोई गलती से भी उस पेड़ के नीचे 'मुत' (पेशाब कर) दे, तो या तो वो पागल हो जाता है या फिर चंद दिनों में उसकी मौत निश्चित है।"

तभी भरत, जो अपनी फटी जींस और निडर अंदाज़ के लिए मशहूर था, हंसकर बोला, "अबे ओए! मुझे बताना वो पेड़ कहाँ है, मैं वहीं जाकर मुतूंगा और ज़ोर से चिल्लाकर कहूँगा— मैं निर्मित हूँ!"

भरत की इस बात पर पूरी बालकनी ठहाकों से गूँज उठी। जो डर का माहौल बन रहा था, वो पल भर में हंसी में बदल गया। मैंने मन ही मन सोचा, "चलो, अब माहौल थोड़ा हल्का हुआ।"

लेकिन श्लोक को कहाँ चुप रहना था। उसने अपनी बारी आने पर भावनगर का एक किस्सा सुनाया, "मेरे इलाके में एक पुरानी खंडहर जैसी इमारत है। कहते हैं रात के 3 बजे के बाद अगर कोई वहाँ से गुज़रे, तो उसे एक बकरे की परछाई दिखाई देती है। अजीब बात ये है कि बकरे का शरीर तो स्थिर रहता है, लेकिन उसकी कटी हुई गर्दन इंसान के साथ-साथ चलती है। सामने वाली दीवार पर उस बिना सिर वाली गर्दन की परछाई साफ दिखती है। कहा जाता है कि वहाँ कभी बकरों का एक परिवार रहता था और ये भूत बकरा उनमें आखिरी था।"

'भूत बकरा' का नाम सुनते ही हम फिर से हंस पड़े। मयूर ने बीच में टांग अड़ाई, "अबे! ये बकरा क्या मटन की दुकान ढूंढता रहता होगा?"

निशांत ने भी अपनी तरफ से एक तालाब का किस्सा सुना दिया, जहाँ दिन में भी कोई अकेला नहाने नहीं जाता था क्योंकि कोई अदृश्य हाथ नीचे से पैर पकड़ लेता था। मयूर ने फिर मज़ाक किया, "शायद वो भूत ये चेक करता होगा कि किसने चड्ढी पहनी है और किसने नहीं!"

हंसी तो आ रही थी, पर कहीं न कहीं सबके अंदर एक अनजाना डर पैठ बना रहा था। अब सबकी निगाहें मुझ पर थीं। मैंने एक लंबी सांस ली और अपने नवोदय स्कूल के दिनों का वो सचमुच का डरावना किस्सा सुनाना शुरू किया।

"यह बात 2004 की है, शनिवार का दिन था। रविवार को घर भाग कर जाने की खुशी में हम शनिवार रात को ही अपने सारे कपड़े धोकर रख लेते थे। हमारे हॉस्टल में पानी की किल्लत थी, इसलिए हम दूर श्मशान के पास वाले तालाब की पानी की टंकी पर कपड़े धोने जाते थे।"

सबके कान खड़े हो गए। मैंने आगे कहा, "रात के करीब 11 बज रहे थे। सन्नाटा ऐसा कि अपनी सांसें भी सुनाई दें। मैं और मेरे तीन दोस्त—दिनेश, जितेंद्र और मितेश—बाल्टी लेकर निकले। फुटबॉल ग्राउंड पार करने के बाद वो सुनसान टंकी आती थी, जिसके एक तरफ गहरा तालाब था और दूसरी तरफ खामोश श्मशान। हमने अपने कपड़े उतारकर साइड में रखे और सिर्फ चड्ढी में कपड़े धोने लगे।"

रात के करीब 12:30 बजे होंगे। अचानक मितेश थका हुआ सा रुका और कांपती आवाज़ में जितेंद्र से बोला, "भाई, उधर श्मशान की तरफ देख... कुछ सफ़ेद सा हिल रहा है।"

मैं और दिनेश कपड़े रगड़ने में व्यस्त थे। हमने सोचा ये दोनों काम से बचने के लिए बहाने बना रहे हैं। लेकिन तभी फुटबॉल ग्राउंड की तरफ से एक चीख गूँजी— "भागो! सालों भागो!"

हमने पलटकर देखा तो मितेश और जितेंद्र सरपट भाग रहे थे। मैंने और दिनेश ने जब श्मशान की ओर देखा, तो हमारे भी प्राण सूख गए। अंधेरे में सचमुच कोई सफ़ेद लिबास वाला साया धीमे-धीमे चल रहा था, जैसे कोई चुड़ैल हो। हमने न आव देखा न ताव, भीगे कपड़े और बाल्टी वहीं छोड़ी और अपनी चड्ढियों में ही हॉस्टल की तरफ ऐसी दौड़ लगाई कि मिल्खा सिंह भी शरमा जाए। हम सीधे अपने कमरों में घुसे और डर के मारे बिना कपड़े बदले वैसे ही सो गए।

अगली सुबह जब धूप खिली, तो हम हिम्मत जुटाकर अपनी बाल्टियाँ लेने पहुँचे। डरते-डरते श्मशान की ओर देखा तो अपनी बेवकूफी पर हंसी आ गई। वहाँ कोई चुड़ैल नहीं थी, बल्कि एक बड़ी सफेद प्लास्टिक की थैली एक पेड़ की टहनी में फंसी हुई थी, जो हवा के झोंकों से ऐसे हिल रही थी जैसे कोई इंसान चल रहा हो।"

किस्सा खत्म हुआ, तो बालकनी में ऐसा घनघोर सन्नाटा छा गया कि सुई गिरने की आवाज़ भी सुनाई दे जाए। सब मुझे घूर रहे थे। डर का आलम ये था कि किसी की हिम्मत अकेले टॉयलेट जाने तक की नहीं हो रही थी।

रात के 3 बज चुके थे। मैंने उठते हुए कहा, "चलो भाई, अब बहुत हुआ। कल प्रैक्टिकल है, मुझे सोना चाहिए।"

निर्मित ने जाते-जाते कहा, "भाई, एक-एक आखिरी कस लगाकर जाते हैं।" हमारे पास 3 सिगरेट बची थीं और हम 7 लोग थे। मैंने मज़ाक में कहा, "अबे 3 सिगरेट और 7 प्यासे? और एक सुबह के लिए भी तो बचानी होगी तुझे?"

भरत बोला, "तू जला तो सही, बारी-बारी से कस मारेंगे, दोस्ती इसी का नाम है।"

सिगरेट खत्म हुई, धुएं के साथ वो डर भी थोड़ा कम हुआ। मैंने सबको 'गुड नाइट' कहा और नीचे अपने कमरे की तरफ बढ़ने लगा। सीढ़ियाँ उतरते हुए मेरी नज़र उसी कोने पर पड़ी जहाँ बैठकर मैंने मीनल से बात की थी।

अचानक दिल की धड़कन तेज़ हो गई। मैंने जेब से फोन निकाला और स्क्रीन ऑन की। पूरा दिन बीत गया था, मैंने उसे इतने मैसेज और कॉल किए थे, पर अब तक कोई जवाब नहीं आया था। क्या वो ठीक होगी? क्या उसने कोई गलत कदम तो नहीं उठा लिया? या वो बस मुझे इग्नोर कर रही थी?

उस सुनसान गैलरी में खड़े होकर मैंने फिर से उसका चैट खोला, पर वहां सन्नाटा पसरा था। रात की उन डरावनी कहानियों से ज़्यादा डर मुझे अब मीनल की उस खामोशी से लग रहा था।

बेल्ट के निशान और टूटती उम्मीदें

सन्नाटे से भरी गैलरी में खड़ा मैं अब भी अपने फोन की स्क्रीन को निहार रहा था। पिछले तीन दिनों में मैंने उसे अनगिनत कॉल और मैसेज किए थे, लेकिन जवाब में सिर्फ सन्नाटा मिला था। मन में एक बार फिर ख्याल आया, "एक आखिरी कोशिश और सही।" मैंने कांपती उंगलियों से एक मैसेज टाइप किया। अभी मैं सीढ़ियाँ उतरकर अपने कमरे की ओर बढ़ ही रहा था कि अचानक फोन की वाइब्रेशन ने मेरे हाथ सुन्न कर दिए।

स्क्रीन पर वही नंबर चमक रहा था। आखिर तीन दिन बाद उसका कॉल आ ही गया!

मैं पागलों की तरह वापस ऊपर की ओर भागा और उसी कोने वाली जगह पर जाकर बैठा जहाँ पहली बार उससे बात हुई थी। कॉल उठाते ही मेरे अंदर सवालों का सैलाब उमड़ पड़ा। "हेलो! कहाँ हो यार आप? इतने दिनों से मैं आपको कॉल और मैसेज कर रहा हूँ, कोई जवाब क्यों नहीं दिया? खाना खाया आपने? अब हालात कैसे हैं? क्या उस लड़के से बात हुई? घर पर सब ठीक है ना?"

दूसरी तरफ से एक बेहद दबी हुई और थकी हुई आवाज़ आई— "वो... हाय! हेलो..."

"रुको... रुको... आराम से!" वह धीमे से बोली, "इतने सारे सवाल एक साथ मत करो। मैं ठीक हूँ... मतलब, ज़िंदा हूँ। ज्यादा टेंशन मत लो। खाने का तो मन ही नहीं है। और रही बात उसकी... तो मेरी उससे कोई बात नहीं हुई। वो मेरा कॉल नहीं उठा रहा, मैसेज का जवाब नहीं दे रहा। मुझे पक्का यकीन है कि उसने मुझे ब्लॉक कर दिया है।"

इतना कहते ही उसकी आवाज़ भर आई। उसने एक गहरी सांस ली और जो बताया, उसने मेरे रोंगटे खड़े कर दिए। "मैंने घर पर सब बता दिया है..."

"क्या?" मैं सन्न रह गया।

"हाँ," वह फूट-फूट कर रोने लगी। "सबसे पहले मैंने अपनी बड़ी बहन को बताया। उसने मम्मी को और मम्मी ने पापा को। पापा... पापा को जब पता चला, तो उन्हें इतना गुस्सा आया कि वो सीधे मेरे कमरे में आ गए। उन्होंने बेल्ट निकाली और मुझे पागलों की तरह मारना शुरू कर दिया। मैं चीखती रही, पर वो नहीं रुके। फिर... फिर अचानक वो खुद भी मेरे पास बैठकर रोने लगे। उन्होंने मुझे गले लगा लिया और बिलखते हुए कहा— बेटा, हम गरीब लोग हैं, समाज में हमारी जात नीची मानी जाती है। कितनी मेहनत और मुशक्कत से मैं तुम तीनों भाई-बहनों को पढ़ा रहा हूँ। तुम सबसे बड़ी हो, सबसे समझदार... तुमने हमारे साथ ऐसा क्यों किया?"

मीनल की सिसकियाँ अब और तेज़ हो गई थीं। "पापा कह रहे थे कि अब हमारी इज़्ज़त का क्या होगा? जब समाज के लोगों को पता चलेगा, तो वो कैसी-कैसी बातें करेंगे? मैं तो जीते जी मर गया बेटा... समाज की नज़रों में अब मेरी क्या हैसियत रह गई है?"

मेरा कलेजा मुंह को आ रहा था। मैंने उसे चुप कराने की कोशिश की, "मीनल, प्लीज... पहले रोना बंद करो। खुद को संभालो। फिर बताओ कि आगे क्या हुआ?"

उसने सुबकते हुए बताया, "जब मम्मी को पता चला कि मैं... मैं माँ बनने वाली हूँ, तो उन्होंने भी मुझे बहुत मारा। मेरे बाल पकड़-पकड़ कर खींचे और मुझे गालियाँ दीं— 'कुलटा', 'कहाँ मुँह काला करके आई है?' मैंने डर के मारे सब सच बता दिया और उस लड़के की फोटो भी दिखाई।"

"उसका नाम क्या है?" मैंने पूछा।

"उसका नाम मौलिक है," उसने बताया। "मेरे भाई और पापा उसे पागलों की तरह ढूंढ रहे हैं, पर उसका कहीं पता नहीं है। भाई बता रहे थे कि वो कॉलेज में पढ़ता ही नहीं है, बस लड़कियों को फांसता है और उन्हें होटल बुलाकर गलत इस्तेमाल करता है। मुझे अपनी गलती पर इतनी शर्मिंदगी हो रही है कि मन करता है कहीं डूब मरूँ। पापा अब काम पर नहीं जा रहे, माँ बाज़ार नहीं जा रही। सब घर के अंदर कैद होकर रो रहे हैं। मेरी छोटी बहन को मुझसे दूर रहने को कहा गया है। चाचियाँ और मासियां भी आ गई हैं, और वो भी मुझे हर वक्त कोसती रहती हैं।"

मीनल की आपबीती सुनकर मेरे हाथ-पैर ठंडे पड़ने लगे थे। रात की वो हल्की ठंड अब बर्फीली लगने लगी थी। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मैं उसे क्या सांत्वना दूँ। 19 साल की एक लड़की, जिसके सिर पर पूरी दुनिया का बोझ आ पड़ा था।

मैंने हिम्मत जुटाई और कहा, "देखो मीनल, जो गलती होनी थी वो हो गई। अब उसे सुनने और सहने की हिम्मत भी रखो। समाज क्या कहेगा, ये फिलहाल छोड़ दो। अपने परिवार के बारे में सोचो। तुम्हारे पापा-मम्मी तुम्हारे दुश्मन नहीं हैं, वो बस टूटे हुए हैं। भगवान पर भरोसा रखो, वो कोई न कोई रास्ता ज़रूर निकालेगा।"

मैंने उसे और भी समझाया, "अभी तुम हार मान लोगी तो कैसे चलेगा? प्लीज, थोड़ा खाना खा लो। अपने लिए नहीं, तो कम से कम उस मासूम के लिए जो तुम्हारे अंदर है। उसे तो पोषण चाहिए ना? प्लीज, कुछ खा लो। और हाँ, खुद उसे ढूंढने मत निकल जाना, हालात और बिगड़ सकते हैं। घरवाले जो कहें, अभी वो सुनो। मैं प्रार्थना करूँगा कि तुम्हारी ज़िंदगी में सब जल्दी ठीक हो जाए।"

हॉस्टल की वो मस्ती, वो डरावनी कहानियाँ—सब फीकी पड़ गई थीं। असल डर तो उस 19 साल की लड़की की आँखों में था, जो एक गलत फैसले की वजह से अपनी और अपने परिवार की ज़िंदगी दांव पर लगा बैठी थी।

यह उस अजीबोगरीब रात का आखिरी पड़ाव था, जहाँ एक अनजानी लड़की के आंसुओं ने मुझे अंदर तक झकझोर दिया था। हॉस्टल की वह रात अब ढलने को थी, लेकिन यादों का सिलसिला अभी थमने वाला नहीं था।

सुबह की पहली किरण और एक भारी सिर

घड़ी की सुइयाँ रात के 4 बजने का इशारा कर रही थीं। बाहर आसमान का काला रंग अब धीरे-धीरे मटमैला होने लगा था। ठंडी हवा के झोंके शरीर को चीर रहे थे, पर मेरे कान अब भी फोन से चिपके थे। मुझे याद आया कि सुबह मेरा 'वायवा' (Viva) है—इंजीनियरिंग की वो परीक्षा जहाँ प्रोफेसर आपकी आँखों में आँखें डालकर आपकी औकात याद दिला देते हैं। मुझे भी जल्दी कॉलेज पहुँचना था।

मैंने भारी मन से कहा, "मीनल, अब सुबह होने को है। तुम प्लीज कुछ खा लेना और सो जाना। मुझे भी अब निकलना होगा, कल सुबह मेरा वाइवा है। अपना ख्याल रखना... और हिम्मत मत हारना।"

दूसरी तरफ से एक लंबी खामोशी के बाद उसकी आवाज़ आई, जो पहले से थोड़ी शांत लग रही थी। "ठीक है... गुड नाइट! और... और थैंक्यू। सच में, आपका बहुत-बहुत शुक्रिया। आपने मुझे इतना समझाया, इतना हौसला दिया... जबकि हम तो एक-दूसरे को जानते तक नहीं। पता नहीं आप कौन हैं, कहाँ हैं, पर आपकी बातों ने मुझे डूबने से बचा लिया।"

उसकी बातों में जो कृतज्ञता थी, उसने मेरे दिल को छू लिया। मैंने धीमे से कहा, "बस तुम अपना और अपने घर वालों का ध्यान रखना। सब ठीक हो जाएगा।" एक आखिरी 'गुड नाइट' के साथ मैंने कॉल कट कर दिया।

गैलरी से अपने रूम की ओर जाते समय मेरे चेहरे पर एक अजीब सी मुस्कान थी। थकान तो बहुत थी, पर मन हल्का था कि कम से कम उस लड़की से बात हो गई और शायद मैंने उसकी कुछ मदद कर दी। मैं टॉयलेट गया, मुंह हाथ धोया और जैसे ही अपने कमरे का दरवाज़ा खोला, मेरी आँखें फटी की फटी रह गईं

कमरे का नज़ारा बदला हुआ था। साढ़े चार बज रहे थे और मेरे रूममेट्स—जो रात को खर्राटे मार रहे थे—अब उठकर अपनी-अपनी टेबल लैंप जलाए पढ़ाई में जुटे थे। हॉस्टल का यह दस्तूर बड़ा निराला है; जब दुनिया सोती है तब हम जागते हैं, और जब दुनिया जागती है, तब हम मुर्दों की तरह बिस्तर पकड़ लेते हैं।

वे सब सुबह के 'रट्टे' मार रहे थे और मैं अपनी लाल आँखें लिए सोने जा रहा था। मैंने राजू को आवाज़ दी, जो किताब में सिर घुसाए बैठा था, "भाई, मुझे प्लीज़ 9 बजे उठा देना। वाइवा है, वरना निपट जाऊँगा।" राजू ने बिना गर्दन घुमाए बस एक हाथ ऊपर उठाकर 'ओके' का इशारा कर दिया।

मेरा बेड किताबों और फैले हुए कंबल से भरा पड़ा था। मैंने खीझते हुए किताबें किनारे कीं, कंबल को झटककर ठीक किया और अपने लिए सोने की एक पतली सी जगह बनाई। कमरे की ट्यूबलाइट जल रही थी, लड़कों की फुसफुसाहट और पन्ने पलटने की आवाज़ें आ रही थीं, जिससे नींद आँखों से कोसों दूर भाग रही थी।

मैंने तकिया ठीक किया, हेडफोन कान में लगाए और के.के. का कोई धीमा सा गाना चला दिया। कंबल को सिर तक ओढ़ लिया ताकि लाइट आँखों में न चुभे। उस अंधेरे में, कंबल के अंदर, मुझे फिर से मीनल की बातें याद आने लगीं—उसके पिता का बेल्ट, उसकी माँ की गालियां, और वो 'मौलिक' नाम का लड़का।

गाने की धुन और थकान का ऐसा संगम हुआ कि कब मेरी आँख लग गई, मुझे पता भी नहीं चला। वह नींद गहरी थी, पर उस नींद में भी एक अनजाना डर और मीनल की वो सिसकती हुई आवाज़ मेरा पीछा कर रही थी।

चावलों का पहाड़ और थम्स-अप का दंगल

सुबह की पहली किरण के साथ जब मेरी आँख खुली, तो सबसे पहले ख्याल मीनल का ही आया। मैंने उसे 'गुड मॉर्निंग' का एक छोटा सा मैसेज किया और कॉलेज के लिए तैयार होने लगा। पूरा दिन बीत गया, सूरज ढलकर शाम के आगोश में समा गया, लेकिन मीनल का कोई जवाब नहीं आया। मेरे फोन की कॉल लॉग्स और इनबॉक्स उसकी खामोशी से भरे पड़े थे।

मेरे इस बदले हुए रवैये से दोस्तों की टोली परेशान थी। मयूर, जो मुझे सबसे बेहतर समझता था, बार-बार करीब आकर पूछता, "भाई, सच बता क्या हुआ है? तू वो सागर नहीं लग रहा जो कॉलेज की जान हुआ करता था। तेरी मस्ती, तेरे जोक्स... सब कहाँ गायब हो गए?"

तभी अचानक भरत और निर्मित ने पीछे से आकर मेरा गला दबाया—उनका पुराना तरीका था मुझे छेड़कर हंसी-मजाक शुरू करने का। लेकिन आज मैंने कोई विरोध नहीं किया, कोई चुटकी नहीं ली। मुझे शांत देखकर उन्हें भी मज़ा नहीं आया। मैंने बस फीकी मुस्कान के साथ कहा, "अरे कुछ नहीं भाई, बस तबीयत थोड़ी ढीली लग रही है। सब ठीक है।"

उस दोपेहर को मैंने मयूर का कॉल टाल दिया था और ऊपर महफ़िल में जाने के बजाय जल्दी सो गया था। लेकिन अगले दिन कहानी कुछ और ही मोड़ लेने वाली थी।

उस रात हमने तय किया कि आज 'कुणाल भाई' के कैंटीन में खाना खाएंगे। रास्ते में अजय और धवल मिल गए, जो पेट पूजा करके लौट रहे थे। उन्होंने दूर से ही अंगूठा दिखाया, "भाई, आज की सब्जी एकदम कड़क बनी है, मिस मत करना!"

कैंटीन पहुँचते ही पता चला कि दिनेश भाई ने मेरी पसंदीदा सब्जी बनाई थी। मैंने सोचा कि दिनेश भाई को एक 'मावा' (तंबाकू/गुटखा) खिला देता हूँ, अगर वो खुश रहे तो रोज़ मेरी फेवरेट सब्जी ही बनाएंगे। कैंटीन खाली थी, सिर्फ हम दोस्तों की टोली और शांति।

मयूर ने शरारत से कहा, "सागर, आज तू आखिरी में खाना लेगा। पहले हम सब अपनी प्लेटें भर लें, जो बचेगा वो तेरा।" मैंने भी चुनौती स्वीकार कर ली, "ठीक है भाई, मंज़ूर है!"

चावलों की एक बड़ी तपेली (बर्तन) रखी थी। सबने बारी-बारी से अपने हिस्से के चावल लिए। जब मेरी बारी आई, तो मैंने बचे हुए सारे चावल अपनी प्लेट में डाल लिए। प्लेट क्या थी, वो तो 'सवालों' (चावलों) का हिमालय लग रहा था। मैंने उस पहाड़ के बीच में ज्वालामुखी की तरह दाल और सब्जी उड़ेल दी। सब मुझे पागलों की तरह देखते हुए हंसने लगे। निर्मित बोला, "अबे, आज अगर कुंभकरण भी यहाँ होता, तो तुझे देखकर शर्म से पानी-पानी हो जाता!"

सच तो यह था कि उस उम्र में मेरी भूख का कोई अंत नहीं था। दिन भर कॉलेज की भागदौड़ और फिर रात को एक बार डटकर खाना—यही मेरा स्टाइल था। मुझे

बचपन से ही चावल बेहद पसंद थे, मेरी माँ आज भी मेरे लिए रात को अलग से चावल बनाती हैं।

तभी एक पुराना किस्सा याद आ गया जब मयूर के कहने पर सबने थोड़े-थोड़े चावल लिए थे और बाकी के आधे चावलों वाली पूरी बड़ी चलनी (जिसमें चावलों का पानी निकाला जाता है) ही मैंने उठा ली थी। मैंने उसे अपनी टेबल पर रखा और ऐलान कर दिया, "अब इसमें से कोई नहीं लेगा, ये सिर्फ मेरे लिए है!"

तभी कैंटीन में काम करने वाली लीला मासी की आवाज़ आई, "बेटा, थोड़ा सा मुझे भी दे दे, मेरा खाना अभी बाकी है।"

मैंने तुरंत चुटकी ली, "मासी, आप निर्मित की थाली से ले लो, उसने वैसे ही अपनी औकात से ज्यादा भर लिया है।"

इतना कहना था कि पूरी कैंटीन 'लीला... लीला...' के नारों से गूँज उठी। निशांत और श्लोक तो कोने में बैठकर निर्मित को 'लीला... ओए लीला!' कहकर छेड़ने लगे। हॉस्टल में निर्मित का नाम अक्सर लीला मासी के साथ मज़ाक में जोड़ा जाता था।

दबाकर खाना खाने के बाद अब बारी थी प्यास बुझाने की। सबने थम्स-अप (Thums Up) का आर्डर दिया। बातों-ही-बातों में मेरी और भरत की शर्त लग गई।

भरत ने सीना फुलाकर कहा, "मैं 3-4 बोतलें तो आराम से पी सकता हूँ।"

मैंने जोश में आकर कह दिया, "अबे जा! मैं 7-8 बोतलें खाली कर दूँ।"

बस फिर क्या था, कैंटीन का कमरा एक अखाड़े में तब्दील हो गया। कुणाल भाई ने चुनौती स्वीकार की और तीन कुर्सियां बीच में लगा दीं। मुकाबला मेरे, भरत और निर्मित के बीच था। मयूर ने कैमरामैन की भूमिका संभाली और रिकॉर्डिंग शुरू कर दी।

निर्मित ने शुरुआत की। उसने दो बोतलें गटक लीं, पर तीसरी पर आते-आते उसके 'फाफे' पड़ने लगे। एक ज़ोरदार डकार के साथ उसने हथियार डाल दिए। फिर भरत की बारी आई, जो दूसरी बोतल में ही ढेर हो गया।

अब सबकी निगाहें मुझ पर थीं। दिनेश भाई ने तो थम्स-अप की पूरी पेटी ही मेरी टेबल पर रख दी। उन्हें मुझ पर पूरा भरोसा था। मैंने पहली बोतल हंसी-मजाक में ही खत्म कर दी। फिर दूसरी, तीसरी और चौथी! जब मैंने पांचवीं बोतल का ढक्कन खोला, तो कैंटीन में सन्नाटा छा गया। सब सांसें रोककर मुझे देख रहे थे।

पाँचवीं बोतल खत्म करने में थोड़ा वक्त लगा। मयूर बोला, "आज चावल ज़्यादा दबा लिए हैं इसने, वरना ये भी चुटकियों में उड़ जाती।" एक लंबी डकार के साथ मैंने पांचवीं खत्म की और छठी बोतल उठा ली। अभी दो-तीन घूँट ही पिए थे कि कुणाल भाई ने मेरा हाथ पकड़ लिया।

"बस कर छोटे! तू जीत गया है। अब और पिएगा तो पेट खराब हो जाएगा, बीमार पड़ जाएगा। अपनी सेहत का भी सोच!"

मैंने कहा, "ठीक है भाई, पर ये आखिरी बोतल तो खत्म करने दो।" मैंने एक लंबी, गूँजती हुई डकार मारी और छठी बोतल भी सूत ली।

पेट इतना फुल हो गया था कि हिलना भी मुश्किल था। दोस्तों ने कहा, "चल, कॉलेज का एक राउंड लगाते हैं, खाना हज़म हो जाएगा।" मैंने हाथ जोड़कर विनती की, "भाई, 15 मिनट रुक जाओ। मेरे पेट के ज्वालामुखी को शांत होने दो, फिर जहाँ बोलोगे वहाँ चलेंगे।"

उस रात की हंसी और वो थम्स-अप का नशा... कुछ पलों के लिए ही सही, उसने मुझे मीनल के उन कड़वे सच से दूर कर दिया था।

बाइक, बवाल और 'रॉकी हैंडसम' का खौफ

कैंटीन में थम्स-अप के उस ऐतिहासिक दंगल के बाद, हम सब वहीं कुर्सियां खींचकर बैठ गए। दिनेश भाई और कुणाल भाई के साथ हंसी-मजाक का दौर चल रहा था, लेकिन पेट इतना भारी था कि हिलना भी दूभर लग रहा था। कुछ देर बाद मयूर ने उठते हुए कहा, "चलो भाई, अब बहुत हुआ। थोड़ा टहल लेते हैं वरना रात भर डकारें ही आती रहेंगी।"

हम सब कैंटीन से बाहर निकले। कॉलेज के मेन गेट के पास ए-ब्लॉक के सामने एक छोटा सा सुंदर बगीचा था, जहाँ से सड़क गोल घेरे में घूमती थी। हम वहीं घास पर जा बैठे और आती-जाती लड़कियों को 'निहारने' के अपने पुराने शौक में मशगूल हो गए।

तभी, अचानक पूरी यूनिवर्सिटी की लाइट गुल हो गई!

अंधेरा होते ही जैसे 'जुरासिक पार्क' के पिंजरे खुल गए हों। हॉस्टल की खिड़कियों से लड़कों ने अजीबोगरीब जानवरों की आवाजें निकालनी शुरू कर दीं। कोई कुत्ता बन गया था, तो कोई सियार। पूरा कैंपस शोर से गूंज उठा। हम अभी उस शोर का लुत्फ ले ही रहे थे कि श्लोक और कल्पेश अपनी-अपनी बाइक पर सवार होकर वहां पहुंचे।

"ओए, बैठो जल्दी! हॉस्टल चलते हैं," श्लोक ने फुसफुसाते हुए कहा। हम कुल छह लोग थे और दो बाइक। हम तीन-तीन करके उन पर लद गए।

हॉस्टल की ओर जाते समय रास्ते में गर्ल्स हॉस्टल पड़ता था। श्लोक की बाइक आगे थी और कल्पेश उसके ठीक पीछे। पता नहीं उन दोनों के दिमाग में क्या खुराफात चल रही थी, लेकिन जैसे ही गर्ल्स हॉस्टल का गेट आया, श्लोक ने अपनी बाइक अंदर घुसा दी! उसके पीछे कल्पेश ने भी वही किया। हम पीछे बैठे चारों दोस्त हक्के-बक्के रह गए।

अंधेरे का फायदा उठाकर उन दोनों ने पागलों की तरह हॉर्न बजाना शुरू कर दिया। सन्नाटे को चीरती हुई उन हॉर्न की आवाजों से गर्ल्स हॉस्टल की खिड़कियां और दरवाजे धड़ाधड़ खुलने लगे। इससे पहले कि कोई हमें पकड़ पाता, श्लोक और कल्पेश ने बाइक मोड़ी और बिजली की रफ्तार से बॉयज हॉस्टल की तरफ भाग निकले। पीछे से सिक्योरिटी गार्ड्स की सीटियां और चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं, पर हम हवा से बातें कर रहे थे।

हम सीधे मयूर के कमरे में घुसे और बालकनी में ऐसे बैठ गए जैसे हम तो वहां से हिले ही न हों। कुछ देर बाद लाइट आई, तो नीचे का नजारा देखकर हमारे होश

उड़ गए। हॉस्टल के नीचे भीड़ जमा थी, पुलिस की दो गाड़ियाँ खड़ी थीं और सिक्योरिटी वाले टॉर्च लेकर छानबीन कर रहे थे।

"भाई, ये तो सीरियस हो गया," मयूर ने घबराते हुए कहा। श्लोक और कल्पेश को हमने जमकर लताड़ा। "तुम दोनों पागल हो क्या? अब अगर पकड़े गए तो सीधे रेस्टिगेट (निष्कासित) हो जाओगे!"

मैं बेचैनी के मारे नीचे गया और अनजान बनकर अपने दोस्त गार्ड रमेश भाई के पास खड़ा हो गया। "क्या हुआ रमेश भाई? इतनी पुलिस क्यों आई है?"

रमेश भाई ने गंभीर होकर कहा, "सागर भाई, कुछ लड़कों ने गर्ल्स हॉस्टल में घुसकर बड़ा हंगामा किया है। लड़कियां बहुत डर गई हैं और उन्होंने पुलिस में शिकायत कर दी है। अंधेरा था तो शक्लें नहीं दिखीं, पर एक बाइक का नंबर नोट कर लिया गया है।"

यह सुनते ही मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई। मैं भागकर ऊपर आया और सबको हकीकत बताई। कोने में बैठे भरत और जतिन को तो जैसे कोई फर्क ही नहीं पड़ रहा था, वो अपनी मस्ती में थे। पर मैं, मयूर, कल्पेश और श्लोक भारी टेंशन में थे।

हमने रात भर बैठकर 'प्लानिंग-प्लॉटिंग' की। "देखो, अगर कल पूछताछ हुई तो सिर्फ एक ही बात बोलनी है— 'हमें कुछ नहीं पता। हम कमरे में थे। हमारी बाइक कोई और लेकर गया था क्योंकि हमारी बाइक बिना चाबी के भी स्टार्ट हो जाती है।' बस इसी बात पर टिके रहना।" मैंने श्लोक की तरफ इशारा करके चेतावनी दी, "और तू... तू तोते की तरह सब उगल मत देना, वरना हम सब निपट जाएंगे।"

रात को जब मैं अपने बिस्तर पर लेटा, तो मुझे अपनी ज़िंदगी 'जेठालाल' जैसी लगने लगी। एक तरफ मीनल का वो दर्दनाक सच और उसकी खामोशी, और दूसरी तरफ ये पुलिस और कॉलेज कमेटी का नया बखेड़ा। मुसीबतें जैसे मेरा पता ढूंढते हुए चली आ रही थीं।

अगली सुबह जब नींद खुली, तो फोन श्लोक के मिस्ड कॉल्स से भरा था। उसकी बाइक पहचानी जा चुकी थी। हालांकि उसने रात को ही बाइक हॉस्टल के

पीछे छिपा दी थी, पर किसी 'मुखबिर' ने उसका नाम उगल दिया था। श्लोक को 11 बजे 'डिसीप्लिनरी कमेटी' के सामने बुलाया गया था।

जाने से पहले हमने उसे हिम्मत दी। "डरना मत, बस वही कहना जो तय हुआ है।"

शाम 5 बजे जब श्लोक वापस आया, तो उसके चेहरे की हवाइयां उड़ी हुई थीं। उसने बताया, "भाई, पूरी कमेटी बैठी थी। उन्होंने बहुत दवाब डाला कि सच बोल दूँ, पर मैं अपनी बात पर अड़ा रहा कि मुझे नहीं पता मेरी बाइक कौन ले गया। आखिर में उन्होंने कहा कि अपने पापा को फोन करो।"

श्लोक के पापा का नाम था 'रॉकी'। फेसबुक पर उन्होंने अपनी प्रोफाइल का नाम 'रॉकी हैंडसम' रखा था, जिसकी वजह से हम अक्सर श्लोक की खिंचाई करते थे। पर आज हंसी नहीं आ रही थी। श्लोक को धमकी दी गई थी कि अगर वह दोषी पाया गया, तो उसे रेस्टिगेट कर दिया जाएगा।

मेरी टेंशन डबल हो गई थी। एक तरफ मीनल का कहीं अता-पता नहीं था और दूसरी तरफ श्लोक के 'रॉकी हैंडसम' पापा आने वाले थे। अब आगे क्या हंगामा होगा, यह सोचकर ही मेरा दिल बैठा जा रहा था।

हॉस्टल की रातों का अपना ही एक अलग नशा होता है—कभी गम, कभी हंसी, और कभी पेट भर देने वाली वो बेतुकी शरारतें। उस रात कुणाल भाई की कैंटीन बंद थी, तो हमारी टोली ने कुछ नया करने का फैसला किया।

लिफ्ट का दंगल और उबले अंडों की रेस

कुणाल भाई की कैंटीन पर ताला लटका देख हम सब का दिल टूट गया, पर पेट की आग बुझानी ज़रूरी थी। हमने तय किया कि आज कॉलेज के सामने वाले मॉल के 'बंश्री' रेस्टोरेंट चलेंगे। वहां अनलिमिटेड खाने का बोर्ड लगा था—भारतीय और चाइनीज, दोनों का मेल। जब हम वहां पहुँचे, तो भारी भीड़ थी। वेटिंग लिस्ट में हमारा नाम लिखा गया और पता चला कि कम से कम एक घंटे बाद ही नंबर आएगा।

खाली बैठने की हमारी आदत नहीं थी। हमने सोचा कि क्यों न इस 'टेंशन वाले मूड' को थोड़ा हल्का किया जाए। सामने कांच की लिफ्ट दिख रही थी। हम सब उसमें घुस गए और बिना किसी मंजिल के बस ऊपर-नीचे आने-जाने लगे। जैसे ही लिफ्ट चली, भरत और निर्मित अपनी पुरानी आदत के मुताबिक अंदर कूदने लगे।

लिफ्ट ऐसे हिलने लगी मानो अभी केबल टूट जाएगी। हम सब डर के मारे और मस्ती में चिल्लाने लगे। जैसे ही लिफ्ट चौथी मंजिल पर पहुँची और दरवाज़ा खुला, भरत और जतिन ने एक पल की भी देरी नहीं की। उन्होंने निर्मित को जोर का धक्का देकर बाहर निकाल दिया और फौरन लिफ्ट की लाइट बंद कर दी। लिफ्ट नीचे आ गई और बेचारा निर्मित चौथी मंजिल पर अकेला अंधेरे में खड़ा रह गया। उसे सीढ़ियों से उतरकर नीचे आना पड़ा, और जब वो हाँफता हुआ पहुँचा, तो हम सब हंसते-हंसते लोटपोट हो गए।

आखिरकार हमारा नंबर आया। हमने 'अनलिमिटेड' शब्द को सच कर दिखाया। दबाकर खाना खाया—इतना कि उठने तक की ताकत नहीं बची थी। फिर आलसी कदमों से पास की सोडा शॉप पर गए। वहां रंग-बिरंगे सोडा की लंबी कतार थी। कुछ दोस्त पास की दुकान पर सिगरेट का धुआं उड़ाने लगे। श्लोक अब भी चुपचाप और टेंशन में था। मैंने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, "भाई, फिक्र मत कर, सब ठीक हो जाएगा।"

ये जुमला बोलते ही मुझे फिर से मीनल की याद आ गई। यही शब्द तो मैंने उसे भी कहे थे। न चाहते हुए भी हाथ फोन की ओर गया और मैंने उसे एक और मैसेज कर दिया— "कहाँ हो? जवाब तो दो।"

सोडा पीने के बाद हम हॉस्टल की ओर मुड़े। आज हमने जानबूझकर वो रास्ता चुना जो गर्ल्स हॉस्टल से होकर नहीं जाता था। दो दिन पहले जो हुआ था, उसके बाद पुलिस और कमेटी का डर हमारे दिमाग में ताज़ा था।

हॉस्टल पहुँचकर हमने रात 2 बजे मयूर के कमरे में मिलने का 'कोड' सेट किया और अपने-अपने कमरों में चले गए। मैंने राजू जो मेरी क्लास का एक ओर टॉपर था। मेरा रूम पार्टनर से नोट्स लिए और लिखने बैठ गया, पर दिमाग में मीनल

के सवालों का अंबार लगा था। "सब ठीक तो होगा ना? वो मैसेज क्यों नहीं कर रही?" इन्हीं खयालों के बीच मैंने फोन चार्जिंग पर लगाया और अपनी लिखावट में खो गया।

रात के 2 बजे जब मैं मयूर के कमरे में पहुँचा, तो महफिल जम चुकी थी। मयूर बालकनी में बैठा था। मैंने पेट पर हाथ फेरते हुए कहा, "यार मयूर, फिर से चूहे कूद रहे हैं। मैगी है क्या?"

मयूर ने सिर हिलाया, "मैगी तो नहीं है, पर भरत आज अंडों की पूरी ट्रे लेकर आया है। वही उबालते हैं।"

हमने एल्युमिनियम के बर्तन में पानी भरा, अंडे डाले और वही 'देसी जुगाड़' यानी पानी गरम करने वाला हीटर (Immersion Rod) उसमें डाल दिया। आज माहौल में वो पुरानी रौनक नहीं थी। ऊनो के पत्ते एक कोने में पड़े थे। मयूर, जो केके (KK) के गानों का दीवाना था, आज बस गाने सुन रहा था, गुनगुना नहीं रहा था।

जैसे ही अंडों में उबाल आया, नमक का डिब्बा खुला और दावत शुरू हो गई। भरत और निर्मित के बीच फिर से रेस लग गई कि कौन सबसे ज्यादा अंडे खाएगा। निर्मित तो गरम-गरम अंडा मुंह में डालकर 'हूँ-हूँ' कर रहा था क्योंकि उसका मुंह जल रहा था। श्लोक अब भी गुमसुम था। मैंने अपना छिला हुआ अंडा उसे थमाते हुए कहा, "जल्दी खा साले, वरना ये उबलता हुआ पानी तेरे सिर पर डाल दूँगा।" उसने फीकी हंसी के साथ खाना शुरू किया।

बातों-बातों में 30 अंडे कब गायब हो गए, पता ही नहीं चला। फर्श पर नमक बिखरा था और कमरा अंडों की महक से भर गया था। मैंने भी अपने हिस्से के तीन-चार अंडे निपटाए। करीब 4 बजे हम सब ने एक-दूसरे को 'बाय' कहा।

जब मैं अपने कमरे की ओर बढ़ा, तो गलियारा एकदम सुनसान था। लाइटें मद्धम थीं। कमरे में पहुँचकर बिस्तर पर लेटते ही फिर से मीनल का चेहरा सामने आ गया। सुबह श्लोक के पापा यानी 'रॉकी हैंडसम' आने वाले थे और दूसरी तरफ मीनल की रहस्यमयी चुप्पी। ऐसा लग रहा था कि आने वाला कल कोई बड़ा धमाका करने वाला है।

मौत की घंटी और पुलिस का साया

चौथा दिन। सूरज की पहली किरण के साथ ही मेरे फोन की वाइब्रेशन ने सन्नाटा चीर दिया। सुबह के साढ़े आठ बज रहे थे। स्क्रीन पर एक अनजान नंबर चमक रहा था। पहले तो मैंने काट दिया, पर जब बार-बार कॉल आने लगी, तो मेरे दिल की धड़कन बढ़ गई। "शायद... शायद मीनल होगी," मैंने उम्मीद के साथ सोचा।

कॉल उठाते ही मैंने बेताबी से कहा, "हेलो... हेलो मीनल! कहाँ हो यार?"

दूसरी तरफ से कोई लड़की नहीं, बल्कि एक भारी, कड़क और सर्द आवाज़ आई— "तुम मीनल को कैसे जानते हो?"

मेरा खून जम गया। मुझे लगा शायद उसके गुस्से से भरे पिता या भाई ने कॉल किया है। मैंने हड़बड़ाकर कहा, "सॉरी... सॉरी अंकल, गलत नंबर लग गया।" मैंने तुरंत कॉल काट दिया।

मगर फोन फिर से बज उठा। वही नंबर। इस बार मैंने कांपते हाथों से कॉल उठाया। "तुम कौन हो? कहाँ से बोल रहे हो?" उधर से सवाल आया।

"जी... मैं सागर। चांदखेड़ा इंजीनियरिंग कॉलेज से हूँ। आप कौन?" मैंने डरते हुए पूछा।

तभी बैकग्राउंड में किसी और की आवाज़ आई— "साले को कॉलेज से उठाते हैं, फिर चक्की पीसेगा तो सब सच उगलेगा।" मेरा दिल डूबने लगा। फिर वही भारी आवाज़ आई, "मैं पुलिस स्टेशन से बोल रहा हूँ। मीनल ने कल खुदकुशी कर ली है। उसके फोन में तुम्हारे मैसेज और कॉल रिकॉर्ड्स मिले हैं। पूछताछ के लिए फौरन विसैट (Visat) पुलिस स्टेशन आ जाओ।"

"खुदकुशी!" यह शब्द मेरे कानों में हथौड़े की तरह लगा। पसीना माथे से टपककर शर्ट को भिगोने लगा। हाथ-पैर थरथराने लगे। "ठीक है सर... मैं आता हूँ, बस कॉलेज में खबर कर दूँ।"

तभी कॉल पर किसी तीसरे इंसान की शांत आवाज़ आई, "डरो मत सागर। तुम्हें यहाँ आने की ज़रूरत नहीं है, हम एक घंटे में तुम्हारे कॉलेज आ रहे हैं। बस

वहीं रहना।" पर उसी वक्त वो गुस्से वाला आदमी फिर चिल्लाया, "सर, साले को रिमांड में लेते ही दो-चार फटके पड़ेंगे, अपने आप सब बकने लगेगा।" कॉल कट गया।

मैं कमरे में पागलों की तरह यहाँ-वहाँ घूमने लगा। "अब क्या होगा? किससे मदद लूँ?" मैंने जैसे-तैसे कपड़े बदले और नीचे की ओर भागा। बालकनी से ब्रश करते हुए कांजी ने मुझे देख लिया, "अबे दादाजी! कहाँ भाग रहे हो इतनी सुबह?"

"कॉलेज जा रहा हूँ, कोई मिलने आ रहा है। तू वहीं मिलना!" मैंने पीछे मुड़कर देखा भी नहीं।

कॉलेज गेट पर खड़ा मैं हर आती-जाती कार को शक की निगाह से देख रहा था। कुछ देर बाद एक सफेद कार रुकी। दो आदमी बाहर निकले। जैसे ही उन्होंने नंबर मिलाया, मेरे हाथ में पकड़ा फोन गूँज उठा। मेरी रूह कांप गई।

"सर... मैं सागर।" मैंने धीमी आवाज़ में कहा।

"कार में बैठो," गुस्से वाले पुलिस वाले ने कहा। पर दूसरे ने उसे रोका, "नहीं, ये डर जाएगा। साइड में पार्किंग की तरफ चलो।"

हम गर्ल्स हॉस्टल के पास वाली सुनसान पार्किंग में गए। उनकी आँखें मुझे चीर रही थीं। "तुम मीनल को कैसे जानते हो?"

मैंने बिना कुछ छुपाए उस रात की पूरी कहानी सुना दी। मेरा फोन उनके हाथ में था। वह शांत दिखने वाला पुलिस वाला फोन चेक कर रहा था, जबकि दूसरा मुझे ऐसे घूर रहा था मानो मुझे अभी सलाखों के पीछे डाल देगा। यह 'गुड कॉप, बैड कॉप' का खेल था, और मैं उसमें बुरी तरह फंसा हुआ था।

"जिस रात तुम्हारी उससे एक घंटा सत्रह मिनट बात हुई थी," पुलिस वाले ने धीमे से कहा, "उसी रात उसने बिल्डिंग से कूदकर जान दे दी।"

मैं सुन्न हो गया। आँखों के सामने अंधेरा छा गया। "सर... यकीन मानिए, मैं उसे जानता तक नहीं। एक रॉन्ग नंबर लगा था, वो रो रही थी, तो बस उसे शांत करने के लिए बातें की थीं। मुझे नहीं पता था कि वो ऐसा कुछ कर लेगी।"

"एक घंटे तक कोई अनजान से इतनी लंबी बातें कैसे कर सकता है?" गुस्से वाले ने मुझे डपटते हुए कहा। मैं डर के मारे दो कदम पीछे हट गया।

काफी देर तक पूछताछ चली। आखिर में शांत पुलिस वाले ने मेरा फोन वापस किया और एक कार्ड थमाया। "ठीक है, अभी तुम जाओ। पर शहर छोड़कर कहीं मत जाना। जब भी बुलाएं, आना पड़ेगा।"

उनके जाते ही मैंने गहरी सांस ली, पर गले का सूखापन नहीं गया। मैं पसीने से लथपथ था। जेब टटोली तो पता चला वॉलेट रूम में ही भूल गया हूँ। मैं पास की अन्ना की टपरी पर गया। "अन्ना, एक कड़क चाय दे दो।"

चाय का प्याला हाथ में लिया, पर हाथ इतना कांप रहा था कि आधी चाय फर्श पर गिर गई। अन्ना ने टोक दिया, "क्या हुआ सागर भाई? आराम से पियो।"

"एक और भेज दे भाई, इस बार आराम से पियूँगा," मैंने कहा। चाय के पैसे शाम को देने का वादा कर मैं वहीं बैठ गया। दिमाग में हज़ारों ख्याल आ रहे थे—मीनल की मौत, पुलिस का कार्ड, और मेरे घरवाले। क्या मुझे घर पर बताना चाहिए? क्या मैं मुसीबत में पड़ने वाला हूँ?

तभी हॉस्टल का एक दोस्त बाइक पर पार्सल लेकर निकला। मैंने उससे लिफ्ट ली और कमरे में आकर सीधे बेड पर गिर पड़ा। पंखा चल रहा था, पर कमरे की हवा भारी थी। मीनल का वो 'हाय' अब मेरे कानों में किसी डरावनी गूँज की तरह बज रहा था। जेठालाल की लाइफ तो फिर भी हंसी-मजाक वाली थी, मेरी ज़िंदगी तो अब एक क्राइम थ्रिलर बन चुकी थी।

कमरे में जाकर सोचा अब सो लेता हूँ थोड़ा। कपड़े बदले नाइट ड्रेस वाले और मैं सो ही रहा था कि....

"सीधा गले पे" – एक अनकही शाम

दोपहर की गहरी नींद और सपनों के बीच अचानक फोन की वाइब्रेशन ने मुझे झकझोर दिया। स्क्रीन पर 'श्लोक' का नाम चमक रहा था। नींद के खुमार में मैंने फोन उठाया, "क्या है बे? सोने दे कम से कम संडे तो बख्श दे।"

उधर से श्लोक की आवाज़ आई, पर उसमें हमेशा वाली मस्ती नहीं थी। उसकी आवाज़ थरथरा रही थी, "भाई... तू प्लीज़ अभी के अभी मेरे रूम पे आ। बहुत ज़रूरी काम है, जल्दी आ यार, प्लीज़!" इससे पहले कि मैं कुछ पूछता, उसने फोन काट दिया। मेरा मन हुआ कि उसे दो-चार गालियाँ दूँ और फिर सो जाऊँ, पर उसकी आवाज़ में वो घबराहट कुछ और ही इशारा कर रही थी।

मैं अपने उसी लाल लोअर और बिखरे बालों के साथ, आँखों को मलता हुआ उसके कमरे की तरफ निकल पड़ा। गलियारे में चलते हुए बस यही सोच रहा था कि जाकर इस कमीने को थोड़ा झाड़ूँगा और फिर आकर वापस घोड़े बेचकर सोऊँगा।

वो खौफनाक सन्नाटा

जैसे ही मैंने श्लोक के कमरे का दरवाजा धक्का देकर खोला, वहां का मंजर बदला हुआ था। निशांत और श्लोक पुतले की तरह खड़े थे। उनके चेहरे का रंग ऐसा उड़ा हुआ था मानो उन्होंने कोई भूत देख लिया हो। मैंने झूठी जम्हाई लेते हुए मज़ाक उड़ाया, "क्या हुआ बे? ऐसे क्यों खड़े हो जैसे किसी का कत्ल कर दिया हो? कौन मर गया?"

तभी श्लोक ने एक झटके में सामने सोफे की ओर इशारा किया और लगभग फुसफुसाते हुए बोला, "इनसे मिल... ये मेरे पापा हैं।"

मेरी अगड़ाई बीच में ही अटक गई। शरीर में जो आलस था, वो पल भर में पसीने बनकर बह गया। दिमाग के घोड़े दौड़ने लगे—'ये वही पापा हैं जिनके बारे में श्लोक कहता था कि बहुत सख्त हैं?' मेरी तो बोलती बंद हो गई। मैंने जल्दी से अपनी टी-शर्ट ठीक की और लड़खड़ाती आवाज़ में कहा, "नमस्ते अंकल!"

मैं जैसे ही उनके पैर छूने के लिए झुका, उन्होंने हाथ के इशारे से मुझे रोक दिया। उनकी आवाज़ गहरी और रोबीली थी, "रहने दो बेटा, इसकी ज़रूरत नहीं है।" फिर श्लोक की तरफ देखते हुए ताना मारा, "इसे भी अपने जैसा थोड़ा संस्कारी बना दे, ये तो हाथ से निकला जा रहा है।"

मैं समझ गया कि बम फूट चुका है। अंकल के कानों तक वो पिछले हफ्ते वाली 'बाइक रेस' और 'गर्ल्स हॉस्टल' वाला कांड पहुँच चुका था।

पापा, रॉकी हैंडसम और वो हँसी

माहौल को हल्का करने के लिए मैंने श्लोक की झूठी तारीफों के पुल बांधने शुरू कर दिए, "अरे नहीं अंकल, आप गलत समझ रहे हैं। श्लोक तो हम सब में सबसे ज़्यादा शरीफ और संस्कारी है। ये तो बस..." मेरी बात सुनकर निशांत और श्लोक की आँखें फटी की फटी रह गई, और वे अपनी हँसी दबाने की नाकाम कोशिश करने लगे।

अंकल अपनी जगह से खड़े हुए और बोले, "तू रहने दे बेटा, मुझे पता है मेरा बेटा कितना बड़ा 'हीरो' है।"

मैंने मौके पर चौका मारा और मुस्कुराते हुए कहा, "सच में अंकल, श्लोक सही कहता था, आप वाकई 'रॉकी हैंडसम' लगते हो!" यह कहते ही मैंने एक ठहाका लगाया। अंकल एकदम ठिठक गए। उन्होंने अपनी भौहें सिकोड़ीं और पूछा, "तुम्हें कैसे पता मेरा ये निकनेम?"

मैंने अपनी हँसी रोकते हुए बड़े प्यार से कहा, "अंकल, मैं कबसे आपसे मिलना चाहता था। श्लोक अक्सर आपकी शरारतों और आपके कॉलेज के दिनों की बातें बताता रहता है। आज फाइनली आपसे मिलकर दिल खुश हो गया।"

अंकल के चेहरे की सख्ती पिघलने लगी। उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा और बड़े प्यार से अपने पास बैठा लिया। उनकी आँखों में अब गुस्सा नहीं, बल्कि एक अजीब सी चमक थी। उन्होंने धीमे से पूछा, "अच्छा ये बता... उस रात असलियत में हुआ क्या था? तू इन दोनों से ज़्यादा समझदार लगता है, सच बता दे।"

किस्सा-गोई और भावनाओं का सैलाब

फिर मैंने शुरू किया—बाइक की वो रफ़्तार, गर्ल्स हॉस्टल के बाहर वो बचकानी हरकतें और फिर पुलिस की वैन देखकर हमारा भागना। मैंने सब कुछ मिर्च-

मसाला लगाकर सुनाया। श्लोक और निशांत कोने में खड़े काँप रहे थे कि अब पड़ेगी मार! लेकिन जैसे ही किस्सा खत्म हुआ, अंकल ज़ोर से ठहाका मारकर हँसने लगे।

वे मजे लेकर पूछ रहे थे, "अच्छा! फिर क्या हुआ? फिर तुम कहाँ छिपे?"

उनका वो अंदाज़ देखकर मैं दंग रह गया। उन्होंने श्लोक को पास बुलाया और गले लगा लिया, "कमीने! ये तो बिल्कुल मेरे जैसा ही निकला।"

उस पल मेरी आँखें भर आईं। अंकल और श्लोक का वो मिलन देखकर मुझे अपने पापा की याद आने लगी। घर से दूर, इस हॉस्टल की चारदीवारी में उस वक्त मुझे अपने पिता की कमी बहुत खली। अंकल ने शायद मेरा चेहरा पढ़ लिया था। उन्होंने अपनी बाहें फैलायीं और कहा, "अरे ओ दार्शनिक! तू भी आज गले लग जा। आज से तू भी मेरा बेटा है।"

जैसे ही मैं उनके गले लगा, मेरे मन का सारा बोझ हल्का हो गया। पुलिस की टेंशन, मीनल का वो ड्रामा और करियर का दबाव—सब उस एक गले मिलने में पिघल गया।

पिता से पितामह का सफर

इसके बाद शुरू हुआ यादों का कारवां। अंकल अब 'पिताजी' से 'पितामह' (बुजुर्ग और अनुभवी मार्गदर्शक) बन चुके थे। उन्होंने हमें अपने कॉलेज के दिनों के वो किस्से सुनाए कि हम दंग रह गए। उनके कुछ किस्से तो बिल्कुल श्लोक की हरकतों जैसे थे। तब समझ आया कि ये 'डीएनए' का खेल है।

फिर उन्होंने माहौल को थोड़ा गंभीर किया और कहा, "देखो बच्चों, मस्ती-मजाक जीवन का हिस्सा है। मैं ये नहीं कहता कि मत करो। खूब करो, ये दिन फिर नहीं आएंगे। लेकिन इतना ध्यान रखना कि तुम्हारी मस्ती से किसी दूसरे को तकलीफ न हो। और सबसे ज़रूरी बात—पढ़ाई। ये सब तब तक ही अच्छा है जब तक तुम्हारी मार्कशीट सलामत है।"

अंकल के जाने का वक्त हो गया था। हम तीनों उन्हें छोड़ने नीचे कार तक आए। मेरा मन कर रहा था कि उन्हें रोक लूँ, उनसे और बातें करूँ। गाड़ी में बैठते

वक्त उन्होंने श्लोक के सिर पर हाथ रखा और फिर मेरी तरफ देखकर कहा, "ख्याल रखना सबका, और अगली बार ऐसी गलती मत करना कि मुझे तुम्हें जेल से छुड़ाने आना पड़े।" उनकी आँखों में एक पिता का प्यार और थोड़ी सी नमी थी।

कार जैसे ही गेट से बाहर निकली, श्लोक थोड़ा उदास खड़ा था। मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा और उसे ज़ोर से खींचकर एक जप्पी दी और कहा, "अबे हँस ले साले! आज तो गोटे गले तक आ गए थे, बाल-बाल बचे हैं हम!"

निशांत और श्लोक ज़ोर से हँस पड़े। और बस, उसी दिन से हम तीनों के बीच वो जुमला अमर हो गया— "सीधा गले पे!" जब भी कोई मुश्किल आती या हम फंसते, हम बस एक-दूसरे को देखकर यही कहते और सारी टेंशन हवा हो जाती।

सन्नाटे की गूँज और अग्निपरीक्षा

अंकल के जाने के बाद हॉस्टल का वह कमरा, जो अभी कुछ देर पहले ठहाकों से गूँज रहा था, अचानक भारी लगने लगा। श्लोक और निशांत अपनी ही दुनिया में खोए थे, पर मेरे भीतर एक अलग ही बवंडर उठा हुआ था। मैं बिना कुछ बोले अपने कमरे की ओर भागा। दरवाज़ा अंदर से बंद किया और सीधा बेड पर गिर गया।

नींद आँखों से कोसों दूर थी, पर शरीर थक कर चूर हो चुका था। छत पर चलते हुए पंखे की चरमराहट में मुझे पुलिस की सायरन सुनाई दे रही थी। "क्या होगा मेरा? अगर बात घर तक पहुँच गई तो?" यह सवाल किसी ज़हरीले नाग की तरह मेरे दिमाग में कुंडली मारकर बैठा था। मम्मी का चेहरा, पापा की उम्मीदें और छोटे शहर की वो साख... सब कुछ दांव पर लगा दिख रहा था। मन किया कि अभी फोन उठाऊं और घर पर सब सच बता दूँ, पर हिम्मत जवाब दे गई। किससे बात करूँ? कौन समझेगा कि मैं बेकसूर था? रात भर करवटें बदलते हुए बस ख्यालों के भूत मेरा पीछा करते रहे।

वो पाँच दिन और इंतज़ार का ज़हर

अगले चार-पाँच दिन किसी वनवास से कम नहीं थे। मेरा फोन जब भी बजता, मेरा दिल हलक में आ जाता। हर अननोन नंबर यमराज का बुलावा लगता था। न

पढ़ाई में मन लग रहा था, न खाने में स्वाद था। श्लोक और निशांत भी चुप-चुप थे, मानो हम सब एक अदृश्य तलवार के नीचे जी रहे हों। पुलिस वालों का कोई कॉल नहीं आया, कोई मैसेज नहीं। यह सन्नाटा और भी डरावना था। कहते हैं न कि तूफान से पहले की शांति सबसे घातक होती है।

पाँचवें दिन की शाम, जब सूरज ढल रहा था और आसमान का रंग गहरा लाल हो गया था, मुझमें न जाने कहाँ से एक अजीब सी बेचैनी भरी हिम्मत आई। मैंने तय किया कि इस 'सस्पेंस' को खत्म करना होगा। कांपते हाथों से मैंने उस पुलिस वाले का नंबर मिलाया जो केस देख रहा था।

दो रिंग गईं... तीसरी... चौथी... और फिर भारी आवाज़ आई, "हेलो?"

मैंने थूक गटका और लड़खड़ाती आवाज़ में कहा, "सर... नमस्ते। मैं... मैं वो हॉस्टल से बोल रहा हूँ। सर, सब ठीक तो है? वो मीनल का क्या हुआ?"

उधर से एक लंबी सांस सुनाई दी, फिर ऑफिसर की आवाज़ थोड़ी नरम हुई, "हाँ... हाँ, सब ठीक है। उसका बॉयफ्रेंड मिल गया है। सारी कड़ियाँ जुड़ रही हैं, पूछताछ चल रही है। हम तुझे बताने ही वाले थे कि अब तेरी ज़रूरत नहीं है।"

फिर उन्होंने थोड़ा हंसते हुए और चेतावनी भरे लहजे में कहा, "और सुन ओ हीरो! आगे से ध्यान रखना कि किसी भी अनजान लड़की या नंबर से इतनी लंबी बातें मत पेलना, वरना अगली बार रॉकी हैंडसम वाले पापा भी नहीं बचा पाएंगे। जा, अब मन लगाकर पढ़ाई कर!"

राहत और रूह का बोझ

फोन कटते ही ऐसा लगा जैसे मेरे कंधों से हिमालय पर्वत उतर गया हो। मैं वहीं ज़मीन पर एक कोने में बैठ गया। महीनों बाद मैंने इतनी गहरी और साफ सांस ली थी। मन एकदम 'रिलैक्स' हो गया था, लेकिन जैसे ही डर की परत हटी, वहां एक गहरी उदासी ने जगह ले ली।

मेरा दिमाग अब मीनल की ओर मुड़ गया। वह लड़की... जिसने अपनी जान दे दी। क्यों किया होगा उसने ऐसा? क्या वह सच में गलत थी? या वह बस एक ऐसी

उलझन में फंस गई थी जहाँ से बाहर निकलने का रास्ता सिर्फ मौत की गली से होकर जाता था?

मेरे मन में एक टीस उठी। एक दार्शनिक सवाल बार-बार कौंधने लगा— "क्या हर युग में सीता को अग्निपरीक्षा देनी ही पड़ती है? और क्यों?"

मैंने मीनल को कभी देखा नहीं था, उसे ढंग से जानता भी नहीं था। लेकिन उस पल मेरी नज़र में वह गुनहगार नहीं, एक पीड़ित थी। समाज और हालात की बेड़ियों ने उसे इतना मजबूर कर दिया होगा कि उसे अपनी जान देना ही सबसे आसान लगा।

मीनल और माँ सीता: एक तुलना

उसे याद करते ही अनायास ही मुझे माँ सीता की याद आ गई। पवित्रता का प्रमाण देने के लिए उन्हें आग की लपटों से गुज़रना पड़ा था, और अंत में जब दुनिया के तानों ने उन्हें नहीं छोड़ा, तो उन्होंने धरती की गोद में समा जाना बेहतर समझा।

मीनल भी शायद अपने हिस्से की 'अग्निपरीक्षा' दे रही थी। समाज के ताने, पुलिस की पूछताछ, बदनाम होने का डर और शायद उस बॉयफ्रेंड का धोखा—ये सब मिलकर उसके लिए वो आग बन गए थे जिसमें वह झुलस गई। वह इस मानसिक दबाव और 'सेलब' (तूफान) को बर्दाश्त नहीं कर पाई। जैसे सीता माता ने धरती में समाकर अपनी गरिमा चुनी, वैसे ही मीनल ने मौत को गले लगाकर इस बेरहम दुनिया से किनारा कर लिया।

मैं कमरे के अंधेरे में बैठा सोचता रहा कि हम अक्सर लोगों को उनके अंतिम कदम से जज करते हैं, लेकिन उस कदम तक पहुँचने के लिए उन्होंने कितना दर्द सहा होगा, यह कोई नहीं देखता। खिड़की से आती ठंडी हवा अब मुझे सुकून नहीं, बल्कि एक ठिठुरन दे रही थी। वह रात सिर्फ मेरी आज़ादी की रात नहीं थी, बल्कि एक मासूम की याद में मेरी रूह के मातम की रात भी थी।

राख के निशान और अधूरा प्रेम

अंकल के जाने के दो हफ्ते बाद तक हॉस्टल की हवा में एक अजीब सा भारीपन था। एक शाम, जब मैं अपनी पुरानी किताबों के पन्ने पलट रहा था, मेरे फोन की स्क्रीन पर एक अपरिचित नंबर चमक उठा। मन में वही पुराना डर था, पर मैंने फोन उठाया।

"हेलो, सागर? मैं प्रिया बोल रही हूँ... मीनल की छोटी बहन।"

एक पल के लिए मेरे हाथ ठिठक गए। प्रिया की आवाज़ में एक अजीब सी थकावट और दुख था। बातों-बातों में उसने वो सच बताया जिसने मेरी रूह कँपा दी। मीनल सिर्फ 19 साल की थी और वह गर्भवती थी। घर पर उसकी शादी की बातें उसके बॉयफ्रेंड से चल रही थीं, पर ऐन वक्त पर वह शख्स गायब हो गया।

मैंने भारी मन से कहा, "पर प्रिया, मर जाना ही हर समस्या का समाधान तो नहीं होता न?" मैंने कुछ काम का बहाना बनाकर फोन काट दिया, क्योंकि मेरा दम घुट रहा था। पर दो मिनट भी नहीं बीते थे कि मुझे अपनी बेरुखी पर पछतावा हुआ। मैंने वापस कॉल किया और कहा, "हाँ प्रिया, अब बताओ... क्या हुआ था उस रात?"

वो खौफनाक रात की दास्तान

प्रिया की आवाज़ अब सिसकियों में बदल चुकी थी। उसने जो बताया, वो किसी डरावनी फिल्म से कम नहीं था। मीनल ने अपनी जान लेने का पक्का इरादा कर लिया था। उसने बचने का कोई रास्ता नहीं छोड़ा। पहले उसने ज़हर पिया, फिर शायद उसे डर लगा कि ज़हर असर न करे, तो उसने अपने पिता की शेविंग किट से ब्लेड निकाला और अपनी दोनों कलाइयों की नसें काट लीं। उसके बाद, लहूलुहान हालत में वह छत पर गई और वहां से छलांग लगा दी।

यह सुनते ही मेरे बदन में एक सिहरन दौड़ गई। माथे पर ठंडा पसीना उतर आया। प्रिया की आवाज़ धुंधली होने लगी— "हेलो... सागर? सुन रहे हो?" मैंने हकलाते हुए कहा, "ह... हाँ, बोलिए।"

प्रिया ने बताया कि अस्पताल में उन्होंने मीनल को बचाने के लिए ज़मीन-आसमान एक कर दिया। छोटे अस्पताल से बड़े शहर के महंगे अस्पताल तक का सफर, तीन लाख का बिल, फिर दो लाख और... कुल साढ़े पांच-छह लाख रुपये पानी की तरह बह गए। भाई और पिता ने उसे अपना खून तक दिया, पर वह मासूम जान और उसके भीतर पल रही नन्हीं जान, दोनों हार गए।

"डॉक्टर ने कहा ज़हर पूरे शरीर में फैल चुका है," प्रिया फूट-फूट कर रो रही थी। "पापा तो मीनल की लाश मांगते रहे, पर पुलिस और पोस्टमॉर्टम की कागजी कार्रवाई में ही अगली सुबह के 11 बज गए।"

बिखरता परिवार और एक नई शुरुआत

दुखों का पहाड़ यहीं नहीं रुका। जब मीनल की अर्थी सज रही थी, तब उसके पिता को दिल का दौरा पड़ा। एक तरफ जवान बेटी की लाश और दूसरी तरफ अस्पताल में जिंदगी और मौत से लड़ता पिता। परिवार पूरी तरह बिखर चुका था। माँ ने अन्न का दाना छोड़ दिया था। भाई और प्रिया ने जैसे-तैसे इस टूटे हुए जहाज को संभाला।

प्रिया ने रोते हुए कहा, "मेरी बहन बहुत अच्छी थी सागर... वो मेरी हर ज़िद पूरी करती थी।" मैंने उसे ढांढस बंधाया, "प्लीज़ मत रो, मीनल को अच्छा नहीं लगेगा।"

कुछ वक्त बीता। प्रिया ने अपनी माँ के नंबर से मुझे मैसेज किया और धीरे-धीरे हमारी बातें रोज़ाना होने लगीं। सुबह की पहली किरण से लेकर रात के सन्नाटे तक, हम एक-दूसरे के जीवन का हिस्सा बन गए। उसने मुझे अपनी फैमिली फोटो भेजी।

मैंने फोटो में मीनल को देखा। वह सादगी की मूरत थी—सिंपल सलवार-कमीज, माथे पर बिंदी और पैरों में पायल। वह इतनी सुंदर थी कि उसे देखकर यकीन करना मुश्किल था कि वह अब इस दुनिया में नहीं है। फोटो में उसके पिता गंभीर दिख रहे थे और प्रिया जींस-टॉप में चुलबुली लग रही थी।

इश्क, इनकार और वास्तविकता

धीरे-धीरे हमारी दोस्ती प्यार में बदलने लगी। एक दिन प्रिया ने कह ही दिया, "आई लव यू, सागर।" मैं पहले तो खुश हुआ, पर फिर अचानक मीनल का चेहरा मेरी आँखों के सामने आ गया। मुझे झटका लगा। मैं यहाँ पढ़ने आया था, करियर बनाने आया था। मेरी अपनी कई 'केटी' (बैकलॉग) पेंडिंग थीं।

मैंने खुद को संभाला और प्रिया से कहा, "प्रिया, जो तुम सोच रही हो वो मुमकिन नहीं है। हम सिर्फ दोस्त ही अच्छे हैं। मुझे अपनी पढ़ाई और सपनों पर ध्यान देना है। अगर मैं इन लफड़ों में फंसा, तो मेरा फ्यूचर बर्बाद हो जाएगा।"

प्रिया ने बहुत कोशिश की। उसने माफी मांगी, मिलने की गुहार लगाई, यहाँ तक कि वह खुद मेरे पास आने को तैयार थी। पर मैं अडिग रहा। मैंने गुस्से में कह दिया, "अगर दोस्ती रखनी है तो रखो, वरना बाय।" मैंने कॉल काट दिया।

समय का पहिया और यादों का धुआँ

कुछ दिनों बाद प्रिया मान तो गई, पर अब हमारी बातों में वो पहले वाली गर्मजोशी नहीं रही। वह अक्सर 'बिजी हूँ' कहकर फोन काट देती। धीरे-धीरे हमारे बीच खामोशी की दीवार ऊँची होती गई। मैंने भी उसे कॉल करना बंद कर दिया।

सालों बीत गए। एक दिन फेसबुक स्क्रॉल करते हुए मेरी नज़र एक फोटो पर थमी। वह प्रिया थी, लाल जोड़े में अपने पति के साथ मुस्कुरा रही थी। मैंने उसे 'बधाई' का कमेंट तो किया, पर उसका कोई जवाब नहीं आया।

उस पल मुझे फिर से मीनल की याद आई। वह सादगी भरी लड़की, जिसकी वजह से मेरा और प्रिया का रिश्ता शुरू हुआ था। आज प्रिया अपनी ज़िंदगी में आगे बढ़ चुकी थी, मैं अपने करियर में... पर मीनल? वह तो आज भी उसी काली रात के सन्नाटे में कहीं खोई हुई थी।

वो 'सीधा गले पे' वाला जुमला आज मुझे एक अलग ही चुभन दे रहा था। कुछ किस्से शुरू तो बहुत शोर-शराबे के साथ होते हैं, पर उनका अंत एक लंबी और गहरी खामोशी में होता है।

विदाई की गूँज और एक अमर एहसास

सालों बीत गए, पर 'मीनल' नाम का वो ज़ख्म आज भी हरा है। जब भी मैं अपने फोन की गैलरी में पुरानी यादें खंगालता हूँ, तो अनजाने में ही मेरी उंगलियाँ उस एक फोटो की तलाश करने लगती हैं जो अब वहां नहीं है। प्रिया से मेरा रिश्ता खत्म हुआ, बातचीत बंद हुई, और शायद वो फोटो भी वक्त की धूल में कहीं खो गई। पर मीनल का वो चेहरा... वो सादगी, वो माथे की छोटी सी बिंदी और आँखों में छिपी वो अनकही खामोशी, मेरी यादों के तहखाने में आज भी सुरक्षित है।

आज जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो आँखों के सामने वही पुराने दिन तैर जाते हैं। वो पुलिस की घबराहट, रातों की बेचैनी और श्लोक के कमरे का वो सन्नाटा। मैं आज भी उस गुमनाम लड़के को कोसता हूँ जिसने मीनल जैसी भोली लड़की के विश्वास का कत्ल किया। मन करता है कि अगर वो आज मेरे सामने होता, तो मैं अपनी सारी नफरत उसकी हड्डियों पर उतार देता। पर फिर ख्याल आता है कि नफरत से मीनल वापस नहीं आएगी।

मीनल: एक अनसुनी आवाज़

मीनल कोई साधारण लड़की नहीं थी। वह एक ऐसी रूह थी जिसे बस सुनने वाला चाहिए था। वह शांत स्वभाव की थी, पर जब बोलना शुरू करती तो मानो वक्त ठहर जाता। आप बस उसे देखते रहो और वो अपने छोटे-छोटे सपनों, अपनी छोटी-छोटी बातों का पिटारा खोल देती। उसे विस्तार से बातें करना पसंद था, हर छोटी चीज़ की डिटेल देना उसकी आदत थी। उसकी बातें किसी झरने की तरह बहती थीं, जो सुनने वाले के मन को भिगो देती थीं।

भले ही हमारे रास्ते कभी हकीकत में नहीं मिले, भले ही मैंने उसे कभी सामने से नहीं देखा, लेकिन उसकी कहानी ने मेरे वजूद पर एक ऐसी छाप छोड़ी है जो शायद मौत के साथ ही मिटेगी। उसका और मेरा सफर बहुत छोटा था—चंद फोन कॉल्स, कुछ मैसेज और एक गहरा खौफ। पर वो यादें आज भी मेरे जीवन के सबसे महत्वपूर्ण अध्यायों में से एक हैं।

अग्निपरीक्षा और समाज का चेहरा

आज मुझे समझ आता है कि मीनल की कहानी सिर्फ एक लड़की की आत्महत्या की कहानी नहीं है। यह उन तमाम लड़कियों की खामोश चीख है जो रोज़ समाज की नज़रों में अपनी 'अग्निपरीक्षा' देती हैं। मीनल ने ज़हर पिया, नसें काटीं और फिर छलांग लगा दी—ये सिर्फ मौत के तरीके नहीं थे, बल्कि उस असहनीय दर्द से भागने के रास्ते थे जिसे वह अकेले सह रही थी।

वह हार गई, क्योंकि दुनिया उसे समझ नहीं पाई। उसकी ज़िंदगी का सूरज इतनी जल्दी ढल गया कि वह अपनी रोशनी पूरी तरह बिखेर भी नहीं पाई थी। पर उसकी यह विदाई हमें एक बहुत बड़ा सबक दे गई। यह याद दिलाती है कि हमारे आस-पास ऐसे कई लोग हैं जो अपनी 'खामोश जंग' लड़ रहे हैं। उन्हें हमारे पैसों की नहीं, हमारी दया और हमारी सुनने वाली क्षमता की ज़रूरत है।

एक व्यक्तिगत श्रद्धांजलि: प्यारी मीनल के नाम

मीनल, तुम्हारी आत्मा एक ऐसी लौ थी जो बहुत तेज़ जली और बहुत जल्दी बुझ गई। मैं अब तुम्हें देख नहीं सकता, तुमसे बात नहीं कर सकता, पर तुम्हारी विरासत मेरे अंदर हमेशा ज़िंदा रहेगी। तुम्हारी छोटी सी ज़िंदगी मेरे लिए एक तोहफा है, जिसने मुझे सिखाया कि इंसानियत और हमदर्दी से बड़ा कोई धर्म नहीं है। तुम्हारी याद मुझे और शायद उन सबको जो तुम्हारी कहानी सुनेंगे, एक बेहतर और ज़्यादा संवेदनशील इंसान बनने की प्रेरणा देती रहेगी।

इस कहानी के अंत में एक गहरी खामोशी बची है। वैसी ही खामोशी जो किसी शोर भरे मेले के अचानक खत्म हो जाने के बाद आती है। पर उस सन्नाटे के भीतर प्यार की एक धीमी सी फुसफुसाहट है। एक उम्मीद है कि जहाँ भी तुम होगी, वहां तुम्हें वो सुकून मिल गया होगा जो इस बेदर्द दुनिया ने तुम्हें नहीं दिया।

जागने का वक्त

हो सकता है कि आपमें से कई लोग मीनल को न जानते हों, न आपने उसे हँसते देखा हो। लेकिन उसकी कहानी हर उस इंसान के दुख से जुड़ी है जिसने कभी किसी को खोया है। उसकी ज़िंदगी की ये 'नाज़ुकता' हमें याद दिलाती है कि हर पल कीमती है। हमें अपनी आँखें खोलनी होंगी, अपने दिलों को हमदर्दी से भरना होगा। हमें दूसरों तक पहुँचना होगा, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए।

अगर आप या आपके आस-पास कोई भी किसी अंधेरे दौर से गुज़र रहा है, तो याद रखें—आप अकेले नहीं हैं। मदद माँगना कमजोरी नहीं, ताकत है। उम्मीद हमेशा रहती है, बस ज़रूरत है तो एक हाथ बढ़ाने की।

मीनल चली गई, पर वह एक उजाला छोड़ गई है। एक ऐसा उजाला जो हमें अंधेरे में रास्ता दिखाएगा। तुम्हारी सादगी और तुम्हारे अधूरे सपने हमेशा हमारे दिलों में गूँजते रहेंगे।

"अलविदा मीनल... तुम्हारी खामोशी में भी एक पूरी कायनात छिपी थी।"

-सागरकुमार रमणीकलाल

"अलविदा कहना तो महज़ एक दुनियावी रस्म है 'मीनल',

पर सच्ची रूहें कभी महफ़िल से विदा नहीं होतीं। तुम अब भी यहीं हो-

किताब के इस आखिरी पन्ने की सिहरन में,

किसी की आँखों से छलकते हुए अनकहे आँसू में, और हर उस दिल की धड़कन में, जो आज तुम्हें महसूस कर रहा है।

तुम कोई कहानी नहीं, तुम तो एक 'अहसास' बन गई हो,

जो अब मौत की सरहदों से भी बहुत आगे निकल चुका है।

अलविदा नहीं... तुम अब मुझमें, और हम सबमें हमेशा के लिए बस गई हो।"

-सागरकुमार रमणीकलाल